CENTRE FOR CULTURAL RESOURCES AND TRAINING

MINISTRY OF CULTURE

21 वी सदी के प्रथम दशक में दिल्ली रंगमंच की प्रस्तुतियों (सन २००१ से सन २०१० तक) का समीक्षात्मक अध्धयन एवं विवेचन |

Name.....Arvind Singh

File No.....CCRT/JF-3/61/2015

प्रथम चरण

दिल्ली रंगकर्म की पृष्ठभूमि २१ वी प्रथम सदी तक रंगकर्म का अवलोकन |

व्दितीय चरण

21 सदी के प्रथम दशक में आयोजित महत्वपूर्ण समारोह और उनकी प्रस्तुतिय |

तृतीय चरण

2001 से 2010 तक प्रस्तुतियों का समीक्षाये एवं अध्धयन

चतुर्थ चरण

समकालीन रंगमंच के लिये भारतीय रंगमंच कि दिशाये और संभावना

प्रथम चरण

दिल्ली रंगकर्म की पृष्ठभूमि २१ वी प्रथम सदी तक रंगकर्म का अवलोकन |

दिल्ली रंगमंच में राष्ट्रीय नाट्य विधालय ,संगीत नाटक एकेडमी ,साहित्य कला परिषद्,श्री राम सेंटर फॉर परफमिंग आर्ट्स,लिटिल थिएटर ग्रुप,अनंत ,अजोजा थिएटर, आस्मिता ,इम्प्रेसिव , क्षितिज ,नटखट ,नटरंग,पर्वतीय कला केंद्र ,बहुरूप ,दिगंत आदि कई ग्रुप का बहुत योगदान रहा है |दिल्ली चूँकि भारत कि राजधानी है इसलिए दिल्ली का रंगमंच राज नैतिक और सांस्कृतिक रूप से बहुत सक्षम है|दिल्ली में देश भर से रंगकर्मी अपनी प्रस्तुतिय लेकर आते है|दिल्ली में अनेक भाषाओं में नाटक का मंचन हुआ है| दिल्ली में कई तरह का नाट्य उत्सव हुआ है जिसमे देश के दूसरें जगह और भिन्न भिन्न भाषाओ में नाट्य प्रस्तुतिय हुई | जैसे कि भारत रंग महोत्सव ,पूर्वी एशियन नाट्य समारोह ,पृथ्वी थिएटर नाट्य समारोह,रंग स्वर्ण आदि |

नाई दिल्ली में होने वाला भारत रंग महोत्सव भाषा और योवावर्ग को कभी प्रोत्साहन किया| रंग कर्म के क्षेत्र में रंगभाषा खोज करो कि नाट्य प्रस्तुतिय रही और युवा रंगकर्मी सफलता कि ओर जाते नजर भी आये | कम से कम एक संघर्ष नई भाषा तलाशते हुए दिखे | राष्ट्रिय नाट्य विधालय युवाओ को केंद्र में ला रहा है यह बात एकदम साफ़ हो जाती है २००९ में छात्र डिप्लोमा प्रस्तुति भारंगम का हिस्सा थी |युवा रंगकर्म में ज्योति डोगरा (द डोरबे)अमितेश ग्रोवर(स्टेंज लाइज)

रजत कपूर (हैमलेट)दीपन शिवरामन(स्पाइनल कार्ड)मनोज मिश्र (भारतकथा) आदि एन सभी युवा रंगकर्मी का काम दर्शक ने कभी पसंद किया|ऐसा नहीं है कि युवाओ को केंद्र में लेन के क्रम में राष्ट्रिय नाट्य विधालय वरिष्ठ रंगकर्मी को भुला दिया एम् के रैना (चंदा मामा दूर के) कन्हाईलाल व सावित्री बा (अचिन गोनर गाथा) राजेन्द्रनाथ (जात ही पूछो साधू की)हबीब तनवीर (कामदेव का अपना बसंत ऋतु का सपना) रतन थियम (वैन्ह वी डेड अवेकन)के.एन .पणिक्कर(उत्तर रामचरित) नीलम मान सिंह (लिटिल एयोल्फ़) उषा गांगुली (भोर) आदि वरिष्ठ रंगकर्मी के रंकर्म को सहारा गया | हलाकि लगभग देश के हर हिस्से में तमाम मुश्किलों और मनोरंजन नित नई बदलती हाईटेक चुनौतियों के बीच न सिर्फ बचाए हुए है बल्कि २१ सदी के प्रथम दशक में कुछ नया देते दिखी|२१ सदी के प्रथा दशक में दिल्ली रंगमंच कभी उदय हुआ| संस्कृत नाटको का का मूलरूप से प्रस्तुत किया जाना २१सदि के प्रथम दशक कि एक बड़ी घटना है शायद इसे सही परिप्रेक्ष्य में लेकर रंगकर्मियों और नाट्य समीक्षकों ने यथोचित महत्त्व नहीं दिया है | रणवीर परिषद् जम्मू व्दारा बहस का (अविमारक) सदाशिव परिषद उडीसा व्दारा (भर्तुह्रनिवेद)भोपाल परिषद् व्दारा (त्रिपुरदाह)मुंबई परिषद् व्दारा (मदनकेतु)गंगानाथ झा परिषद् इलाहाबाद (धूर्तसमागत) कर्णाटक व्दारा भास का(अभिषेक)हिमाचल प्रदेश व्दारा (कर्पुर मंजरी) गुरुचयुर परिषद् व्दारा (मालविकगिन्मित्रम) आदि कई संस्कृत नाटक हुए |

२१ सदी के प्रथम दशक में स्त्रियों कि भी बहुत उपलब्धी हुई है| पिछले दशको में पुरुष वर्चस्व प्रधान अन्य क्षेत्र में आये बदलाव कि तरह रंग निर्देशन के क्षेत्र में भी अनेक महिला निर्देशक उभरी है ,जिन्होंने अपनी एक अलग पहचान बनाई है |इसमे से कइयो का काम अनेक दृष्टियो दे महत्वपूर्ण और पद प्रदर्शक रहा है | स्त्रियों कि सामाजिक स्थिति ,जीवन में निजी अनुभव और चीजो को देखने के

भिन्न नजरियों के कारण संभवता धीरे धीरे नाट्य निर्देशन कि मान्य पद्धतिमें भी बदलाव आया है | ईसी क्रम में दिल्ली में पूर्वा नाट्य उत्सव का अयोजन् हुआ था इस आयोजन के दो हिस्से थे पूर्वा नाट्य उत्सव और पूर्वा नाट्य सम्मलेन पहले आठ दिन (३से 10 जनवरी २००३) उत्सव में नाट्य प्रदर्शन हुए जिसमे ५ अन्य एशिया देशो तथा 15 भारतीय महिला निर्देशक के नाटक शामिल थे नाटको का मंचन श्री राम सेंटर राष्ट्रिय नाट्य विधालय परिषद् के अभिमंच और अन्य सभागार में मंचन हुआ जहा कठाके कि ठण्ड के बावजूद देर रात तक दर्शक ने भाग लिया | प्रदर्शन कि अगली सुबह निर्देशकों से बातचीत थी जो उनके काम ,तरीको और नजरिया को समझाने कि दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण थी |इसके जरिये ही अलग अलग देशो और प्रदेशो विशिष्ट स्थितिया ,वहा के रंगकर्म ,परम्पराओ और महिला निर्देशक कि मान्यताओ और दृष्टिके बारे गहरी जानकारिय मिल सकी कुल मिलाकर इस सम्मलेन कि सबसे बड़ी उपलब्धी यही थी कि बिबिध क्षेत्रो से आई महिला निर्देशकों को एक दुसरे औरउनके कामो को जानने का करीब से मौका मिला | और साथ ही साथ सामूहिकता से उन्हें बाल मिला | दूसरी उपलब्धी यह रही कि इससे उन्हें आगे के काम के लिये कुछ कार्यक्रम निश्चित किये ,जिससे उनके काम को नई दिशा मिल सके |सम्मलेन और महोत्सव के जरिये या इन्टरनेट के जरिये यह आदान प्रदान जारी रखा जाय |

राजधानी में रंगमंचीय स्थिति को देखते हुए अक्सर यह कहा जाता था कि रंगमंच दम तोड़ रहा है और उसके पास दर्शक का आभाव है पर ऐसा नहीं है जब भारत रंग महोत्सव ,रंग स्वर्ण .मोहन राकेश ,भारतेंदु नाट्य उत्सव अदि नाट्य उत्सव हुआ तो इनमे ऐसी कई प्रस्तुति थी जिन्हें देखने के लिये भरी भीड़ उमड़ी लोगो के इस उत्साह और उत्सुकता को देख कर आयोजको को कुछ अतिरिक्त प्रस्तुतिया कि व्यवस्था करनी पड़ी |साथ ही इस दौरान कई प्रस्तुतिया को बीच में ही छोड़

कर चले गए ,इससे यह प्रतीत होता है कि वस्तुतः दर्शको का आभाव नहीं बल्कि उनके रूचि और संवेदनाओ के हिसाब से अच्छी प्रस्तुति का आभाव है देखा जाय तो यह एक सकारात्मक स्थिति है ,निश्चय ही अच्छी प्रस्तुतिय कि पृठभूमि में उसके निर्देशकों ,अभिनेताओ और मंच परिकल्पको कि महत्पूर्ण भूमिका होती है और हर प्रस्तुति के बाद नाटक में कुछ न कुछ परिवर्तन और नयापन आता है |

२१सदि के प्रथम दशक में दिल्ली रंग मंच का बहुत बिस्तार हुआ इस समय में कई रंग निर्देशक भी हुए जिन्होंने कभी अच्छा कार्य किया , और इन्होने कभी नई नई तकनिकी को खोजा और अछे से इस्तेमाल किया जो कि रंगमंच को विस्तार देने में सहायक सिद्ध हुआ | कई प्रस्तुति हुई को काफी काबिले तारीफ है| कई नाट्य महोत्सव हुआ जो देश के हर प्रदेश हर भाषा में प्रस्तुति हुई|देश के साथ विदेश के भी तरह तरह नाटक आये जो अपने आप में बहुत खूबसूरत और अच्छे थे | २००० से २०१० तक में भारत कि सभी भाषाओ के आलावा विभिन्न बोलियों के नाटक उत्सुकता के केंद्र तो रहे ही ,उनके रंग उपादानो और रंगयुक्तिया कि प्रभावशीलता भी देखने को मिली |

रंग महोत्सव के दौरान और भी कई महत्वपू और उल्लेखनीय तथ्य सामने आये मसलन विभिन्न भाषाओ कि एकल प्रस्तुतियो की सफलता ,फिल्मो से जुड़े अभिनेता -अभिनेत्रियों का रंगकर्म के प्रति लगाव महिला निर्देशकों कि उल्लेखनीय काम ,क्षेत्रीय भाषाओ और बोलियों के रंगकर्म कि विशेषताए तथा मौलिक और अनुदित नाटको कि स्थिति का व्यवाहरिक इत्यादि खासतौर पर ध्यान खिचती है |

दिल्ली में २००० से २०१० तक बाल रंगकर्म भी बहुत हुआ है जैसे राष्ट्रिय नाट्य विधालय जश्ने बचपन नाट्य समारोह जिसमे भारत के विभिन्न विभिन्न प्रदेश से आते है और यहाँ प्रस्तुति देते है| और भी ग्रीष्म कालीन बच्चो का उत्सव होता है

,साहित्य कला पारिषद व्दारा आयोजत एक महीने का वर्कशाप करने के बाद बच्चो का नाटक कि प्रस्तुति होती है और भी कई महत्पूर्ण कार्य हुआ |

समारोह

भारत रंग महोत्सव	राष्ट्रिय नाट्य विधालय
रंग स्वर्ण	संगीत नाटक एकेडमी
भारतेंदु नाट्य समारोह	साहित्य कला परिषद्
मोहन राकेश उत्सव	साहित्य कला परिषद्
पूर्वा एशियन वुमेन नाट्य समारोह	
नट सम्राट नाट्य समारोह	नट सम्राट
जश्ने बचपन	राष्ट्रिय नाट्य विधालय
एनएसडी ग्रीष्मकालीन समारोह	राष्ट्रिय नाट्य विधालय
एस आर सी ग्रीष्मकालीन समारोह	श्रीराम सेंटर फॉर परफमिंग आर्ट्स
मैलो रंग नाट्य समारोह	मैलो रंग
महेंद्रा नाट्य समारोह	महेंद्रा
पृथ्वी थिएटर फेस्टिवल	पृथ्वी थिएटर
उर्दू ड्रामा फेस्टिवल	उर्दू एकेडमी
हिन्दी ड्रामा फेस्टिवल	हिन्दी एकेडमी

पंजाबी एकेडमी नाट्य समारोह पंजाबी एकेडमी

भारत में जर्मन महोत्सव जर्मन कल्चर सेंटर

प्रदर्शन स्थल

श्री राम सेंटर सफ़दर----------हाश्मी मार्ग मंडी हाउस नई दिल्ली

कमानी सभागार ----------कॉपरनिकस मार्ग मंडी हाउस नई दिल्ली

अभिमंच ----------एन एस डी भगवान् दास मार्ग नई दिल्ली

समुख ----------एन एस डी भगवान् दास मार्ग नई दिल्ली

बहुमुख----------एन एस डी भगवान् दास मार्ग नई दिल्ली

एल टी जी----------कॉपरनिकस मार्ग मंडी हाउस नई दिल्ली

पूर्वा सांस्कृतिक केंद्र ---------- वी3एस निर्माण बिहार नई दिल्ली

अक्षरा थिएटर ----------गोल मार्केट नई दिल्ली

लोक कला मंच ----------लोधी रोड नई दिल्ली

इंडिया हैवीटेट सेंटर ----------लोधी रोड नई दिल्ली

प्यारे लाल भवन ----------आई टी ओ नई दिल्ली

शाह ऑडिटोरियम ---------- कश्मीरी गेट नई दिल्ली

मेघदूत एस एन ए---------- कॉपरनिकस मार्ग मंडी हाउस नई दिल्ली

फिक्की ऑडिटोरियम ----------तानसेन मार्ग मंडी हाउस नई दिल्ली

अल्फाक्स ऑडिटोरियम ----------रफ़ी मार्ग नई दिल्ली

एयर फोर्स ऑडिटोरियम ----------सुब्रोतो पार्क धौला कुंवा नई दिल्ली

विज्ञान भवन ऑडिटोरियम ----------मौलाना आजाद रोड नई दिल्ली

बी सी पाल ऑडिटोरियम---------- चितरंजन पार्क नई दिल्ली

ब्रिटिश कौंसिल डिवीज़न ----------कस्तूरबा गाँधी मार्ग नई दिल्ली

फलकनुमा एंड हमस्ध्वानी ----------प्रगति मैदान नई दिल्ली

ग़ालिब ऑडिटोरियम---------- माता सुंदरी लेन कोटला रोड नई दिल्ली

इंडिया इंटरनेशनल सेंटर ----------लोदी रोड नई दिल्ली

आई सी सी आर ऑडिटोरियम ----------आजाद भवन आई पी एस्टेट नई दिल्ली

ललित कला एकेडमी ----------कॉपरनिकस मार्ग मंडी हाउस नई दिल्ली

मैक्स मुएलर भवन ----------कस्तूरबा गाँधी मार्ग नई दिल्ली

मावलंकर हॉल ---------- विट्ठलभाई पटेल हाउस रफ़ी मार्ग नई दिल्ली

रविन्द्र रंग शाला ----------उपर रिंग रोड नई दिल्ली

श्री राम भारतीय कला केंद्र कॉपरनि----------कस मार्ग मंडी हाउस नई दिल्ली

सीरी फोर्ट ----------एशियन विलेज काम्प्लेक्स नई दिल्ली

त्रिवेणी कला संगम---------- तानसेन मार्ग नई दिल्ली

तीन मूर्ति ऑडिटोरियम---------- तीन मूर्ति भवन नई दिल्ली

प्रस्तुतिया	निर्देशक
राजा कि खोज और गड़बड़झाला	आशीष घोष
फ़ाइनल सौलुशन	संगीता गौड
लोगबाग	संगीता गौड
मामूली आदमी	संगीता गौड
अंतिम दिवस	संगीता गौड
कोर्ट मार्शल	संगीता गौड
रोमियो जूलिएट एंड द डार्कनेस	संगीता गौड
स्टोरी ऑफ़ द टाइगर	संगीता गौड
विछड़े पाणी	मदन लाल सिन्धु
एक लापता सैनिक कि मा	पपिया दास गुप्ता
चक्रव्यूह	विशाल अशरानी
एक्सिदेंतलडेथ ऑफ़ एन एनाक्रिस्ट	विजय कुमार
मै करोड़ पति कैसे बना	रवि तनेजा
देर आये दुरुस्त आये	विणा एस तनेजा
हाफवे हाउस	सी दी सिन्धु और रवि तनेजा

चाँद किसी का कब होता है	राजेश तिवारी
क्या करोगी काकी	श्याम कुमार
जय बाबा गोपीनाथ	फरीद अहमद
बीबियो का मदरसा	फरीद अहमद
कंजूस	फरीद अहमद
अम्मा तुझे सलाम	अरविन्द गौड़
आपरेशन थ्री स्टार	अरविन्द गौड़
रास्ते	सत्यदेव दुबे
द वुमेन	फैसल अलकाजी
आओ साथी सपना देखे	ऍन के शर्मा
तीन नेत्र	आशीष घोष
आमिर खुशरू	जे .एन .कौसिक
बगिया बछारम कि	सुमन कुमार
डोर बेल	विजय सिंह
शकुंतला कि अंगूठी	राम गोपाल बजाज
चेरी का बगीचा	राजेंद्र यादव
शिला सृगार	रबिन् दास
राजा कि रसोई	मोहन महर्षि
अक्स तमाशा	भानु भारती

थान्कू बाबा लोचनदास	बी एम् शाह
एक सपना	स्वानंद किरकिरे
अंजी	दिनेश ठाकुर
कोसी का घटवार	शेखर जोशी
महाब्राह्मण	मुस्ताक काक
होली	चितरंजन त्रिपठी
दीदी ठाकरुन	सतिश आनंद
फतु पागल हो गया	बलराज तंवर,
एक मामूली आदमी	अरविन्द गौड़
एक था गधा	शरद जोशी,
अंधेर नगरी चौपट राजा	यासीन खान
एवं इंद्रजाल	प्रणव मुखर्जी
मै मिन्टो हु	मुस्ताक काक
शीशे के खिलौने	नगमा जाफिर
जहर कांड	सुमन कुमार
सखाराम बाइंडर	राजिंदर नाथ
बड़ा साहब	राजेश दुआ
कुली बेगार	लोकेन्द्र त्रिवेदी
मैमूद	देवेन्द्र राज अंकुर

रत और दिन	देवेन्द्र राज अंकुर
चक्रव्यह	रतन थियम
नवलखा	अनुराधा कपूर
इस्मत आपा के नाम	नसीरुद्दीन शाह
दीवार में एक खिड़की रहती है	मोहन महर्षि
अनामदास का पोथा	रविन दास
घासीराम कोतवाल	राजेंद्र नाथ
ताज महल का टेंडर	चितरंजन त्रिपाठी
मुक्ति	उषा गांगुली
बेगम जान	नादिरा जाहिर बब्बर
रास	राजेश सिंह
इला	सुरेन्द्र शर्मा
संध्या छाया	अमिता प्रवीण
बेगम का प्यांदा	के एस कलसी
दिमाग ए हस्ती दिल कि बस्ती	राम गोपाल बजाज
उसका बचपन	देवेन्द्र राज अंकुर
कहा है कहा	राम गोपाल बजाज
बगिया बांछा राम कि	दिनेस अहलावत
लड़ी नजरिया	चितरंजन त्रिपाठी

ययाति	बिपिन कुमार
और कितने टुकड़े	कीर्ति जैन
नागिन तेरा वंश बढे	अवतार साहिनी
गोली	भारती शर्मा
मोटेराम का सत्याग्रह	अरविन्द गौड़
मुआवजा	यासीन खान
सुपना का सपना	सतीश आनंद
जानेमन	वामन केंद्रे
इहामिर्ग	मुस्ताक काक
पोंगा पंडित	हबीब तनवीर
पंछी	चित्रा सिंह
एंटीगनी	अनुराग कपूर
गोदान	एम् के रैना
बूचडखाना	राम गोपाल बजाज
शार्टकट	रनजीत कपूर
मुझे अमृता चाहिये	मुश्ताक काक
अमानत कि लाठी	रवि तनेजा
सूरज का सातवा घोडा	सुमन कुमार
कमबख्त इश्क	श्याम कुमार

प्रहरी है हम जंगल	लोकेन्द्र त्रिवेदी
एक छल राजा	प्रकाश झा
खोल दो	माया कृष्णाराव
मैकबेथ	आलेख पद्मसी
ताज महल	आभिलाष पिल्लई
उत्तररामचरित्र	प्रशन्ना
अन्तराल	रंजीत कपूर
सब कुछ चकाचक	कृति जैन
त्यागपत्र	राजिन्दर नाथ
काफ्का	सुरेश शर्मा
भक्त पूरनमल	मुन्नी देवी
बगदाद बर्निंग	कीर्ति जैन
नाग मंडल	नीलम मान सिंह
कमाल्मुखी कनिया	प्रकाश झा
अजिजुन	त्रिपुरारी शर्मा
खामोश अदालत जारी है	अवतार सहनी
पंडित जगन्नाथ	भारती शर्मा
१८५७ एक सफ़र नामा	नादिरा जाहिर बब्बर
परती परिकथा	संजय उपाध्याय

मधुशाला	योगेन्द्र चौबे
महानिर्माण	दौलत राम वैद
जल डमरू बजे	राम गोपाल बजाज
ओथेलो	राज बिसरिया
मै इस्तानबुल हु	मोहन महर्षि
चारपाई	अलखनंदन
नरभक्षी	सुरेन्द्र शर्मा
लखटकिया हाथी	सतीश आनंद
एक था राजा	सौरभ भटनागर
अंकल समझा करो	श्याम कुमार
लैला मजनू	राम गोपाल बजाज
किंगलियर	ओंणल्याकुली खोद्जाकुली
कन्यादान	रोविजीता गोगई
ग़ालिब	एम् साईंद आलम
अकबर सलीम	अजीज कुरैशी
ग़ालिब इन न्यू दिल्ली	एम् सहीद आलम
सैया भये कोतवाल	अनिरुद खुटवाड
अंधायुग	प्रवीण कुमार गुंज
परमपुरुष	बापी बोस

धोबी घट से मसान घट तक	बंशी कौल
जिस लौहार नहीं देख्या ओ जम्याह नाइ	राजिंदर नाथ
अनसुनी	अरविन्द गौड़
गधे पर बैठा था शाप	भारती शर्मा
नटी बिनोदनी	अमाल अल्लाना
सकुबाई	नादिरा जाहिर बब्बर
एक रुका हुआ फैसला	कीर्ति जैन
राग टर्न	रनजीत कपूर
डूबी लड़की	भानू भारती
बेगम कि तकिया	रणजीत कपूर
अस्सी बहरी अलंग	सुमन कुमार
स्वप्न वासवदत्ता	अश्वनी कुमार
औरंगजेब	के एस राजेंद्रन
ओथेलो	मोहन महर्षि
अमली	कविता कुंद्रा
महारथी	
शार्ट कट	रणजीत कपूर
मुक्तधारा	सतीश आनंद
लूना	त्रिपुरारी शर्मा

व्दितीय चरण

21 सदी के प्रथम दशक में आयोजित महत्वपूर्ण समारोह और उनकी प्रस्तुतिय |

व्दितीय चरण

21 सदी के प्रथम दशक में आयोजित महत्वपूर्ण समारोह और उनकी प्रस्तुतिया |

दिल्ली भारत कि राजधानी होने के कारण यहाँ बहुत से महत्यपूर्ण समारोह हुआ 2001 से 2010 के बीच सबसे महत्यपूर्ण समारोह में भारत रंग महोत्सव है जो प्रतिवर्ष होता है जिसका आयोजन राष्ट्रिय नाट्य विधालय करता है इस समारोह में देश के कोने कोने से और विदेशो से भी अलग अलग भाषाओ के नाटक होता है |

रंगमंच समारोह में राष्ट्रीय नाट्य विधालय ,संगीत नाटक एकेडमी ,साहित्य कला परिषद्,श्री राम सेंटर फॉर परफमिंग आर्ट्स,लिटिल थिएटर ग्रुप,अनंत ,अजोजा थिएटर, आस्मिता ,इम्प्रेसिव , क्षितिज ,नटखट ,नटरंग,पर्वतीय कला केंद्र ,बहुरूप ,दिगंत आदि कई ग्रुप का बहुत योगदान रहा है |दिल्ली चूँकि भारत कि राजधानी है इसलिए दिल्ली का रंगमंच राज नैतिक और सांस्कृतिक रूप से बहुत सक्षम है|

पूर्वी एशियन नाट्य समारोह ,पृथ्वी थिएटर नाट्य समारोह,रंग स्वर्ण में दिल्ली में पूर्वा नाट्य उत्सव का अयोजन् हुआ था इस आयोजन के दो हिस्से थे पूर्वा

नाट्य उत्सव और पूर्वा नाट्य सम्मलेन पहले आठ दिन (३से 10 जनवरी २००३) उत्सव में नाट्य प्रदर्शन हुए जिसमे 5 अन्य एशिया देशो तथा 15 भारतीय महिला निर्देशक के नाटक शामिल थे नाटको का मंचन श्री राम सेंटर राष्ट्रिय नाट्य विधालय परिषद् के अभिमंच और अन्य सभागार में मंचन हुआ जहा कठाके कि ठण्ड के बावजूद देर रात तक दर्शक ने भाग लिया | मोहन राकेश ,भारतेंदु नाट्य उत्सव अदि नाट्य उत्सव हुआ तो इनमे ऐसी कई प्रस्तुति थी जिन्हें देखने के लिये भरी भीड़ उमड़ी लोगो के इस उत्साह और उत्सुकता को देख कर आयोजको को कुछ अतिरिक्त प्रस्तुतिया कि व्यवस्था करनी पड़ी |साथ ही इस दौरान कई प्रस्तुतिया को बीच में ही छोड़ कर चले गए ,इससे यह प्रतीत होता है कि वस्तुतः दर्शको का आभाव नहीं बल्कि उनके रूचि और संवेदनाओ के हिसाब से अच्छी प्रस्तुति का आभाव है|

जश्ने बचपन नाट्य समारोह जिसमे भारत के विभिन्न विभिन्न प्रदेश से आते है और यहाँ प्रस्तुति देते है|

समारोह

भारत रंग महोत्सव	राष्ट्रिय नाट्य विधालय
रंग स्वर्ण	संगीत नाटक एकेडमी
भारतेंदु नाट्य समारोह	साहित्य कला परिषद्
मोहन राकेश उत्सव	साहित्य कला परिषद्
पूर्वा एशियन वुमेन नाट्य समारोह	
नट सम्राट नाट्य समारोह	नट सम्राट

जश्ने बचपन	राष्ट्रिय नाट्य विधालय
एनएसडी ग्रीष्मकालीन समारोह	राष्ट्रिय नाट्य विधालय
एस आर सी ग्रीष्मकालीन समारोह	श्रीराम सेंटर फॉर परफमिंग आर्ट्स
मैलो रंग नाट्य समारोह	मैलो रंग
महेंद्रा नाट्य समारोह	महेंद्रा
पृथ्वी थिएटर फेस्टिवल	पृथ्वी थिएटर
उर्दू ड्रामा फेस्टिवल	उर्दू एकेडमी
हिन्दी ड्रामा फेस्टिवल।	हिन्दी एकेडमी
पंजाबी एकेडमी नाट्य समारोह	पंजाबी एकेडमी
भारत में जर्मन महोत्सव	जर्मन कल्चर सेंटर

2001 से 2010 भारत रंग महोत्सव ने नाटको और रंगमंच से जुडी कई अवधारणाओं में व्यापक उलटफेर किया है तो कई को और दृढ कर दिया है |मसलन हिन्दी के मौलिक नाटको के आभाव कि बात , जो लम्बे समय से कि जाती रही है वह एक स्तर पर ठीक लगी क्योकि हिन्दी में जितनी भी प्रस्तुतिया हुई उनमे लगभग दो तिहाई अनुवाद थी | हिन्दी के मौलिका नाटको का आभाव की शिकायत बहुत पहले से चली आ रही है | इसके मद्देनजर रंग महोत्सवो का अवलोकन करना बहुत दिलचस्प होगा पिछले रंग महोत्सवो के दौरान हिन्दी के सर्वधिक नाटक हुए लेकिन मौलिक कि तुलना में अनुवाद और रूपांतरण कि संख्या अधिक रही है | रंगकर्म :सार्थक शुरुआत से शुभ संकेत

हलाकि लगभग देश के हर हिस्से में तमाम मुश्किलों और मनोरंजन कि नित नयी बदलती हाइटेक चुनौतियों के बीच यू तो रंगकर्म अपने वजूद को न सिर्फ बचाए हुए है बलकी नव प्रयोगों और सामाजिक -मानवीय सरोकारों का स्पंदन भी बहुधा देखने को मिल जाता है ,मगर नये साल कि शुरुआत इस बार रंगकर्म को कुछ नया आयाम देते दिखी |

3 जनवरी से 20 जनवरी तक राष्ट्रीय नाट्य विध्यालय नई दिल्ली का दसंवा भारत रंग महोत्सव हर बार कि तरह विविधताओं भरा रहा |18 दिनों तक नई दिल्ली के छह प्रेचाग्रहों में ७६ नाट्य प्रस्तुतियों (19 विदेशी नाटक जिसमे पहली बार अफगानिस्तान से दो नाट्य प्रस्तुतिया शामिल हुई)का दर्शको के साथ साचात्कार हुआ |चरणदास चोर (सिंहली),बहरुल इस्लाम का आकाश (असमिया),पोएट एंड डेथ (ईरान),राम नाम सत्य है ,ब्राडवे का हिट बटरफ्लाई और फ्री (चीनी),वामन केंद्र निर्देशत वेध्प्श्य (हिन्दी),स्टे यट अहाइल ,अजीजुन (उर्दू),बंबू ब्लूज और कन्यादान (अंग्रेजी)समेत तकरीबन सभी प्रस्तुतिया अपने आप में अनूठी रही |रंगकर्म अब महानगरो से बाहर निकलकर शहरों में पहुच रहा है यह एक शुभ संकेत है |इसी कड़ी में २० से २६ जनवरी तक बरेली में थिएटर फैस्ट ०८ आयोजित हुआ |वैसे इस आयोजन के लिये ब्रजेश्वर सिंह (अस्थि शल्य चिकित्सक)बधाई के पात्र है जिनकी पहल से इस दौरान कई अच्छे नाटको का मंचन बरेली में सम्भव हो सका |

पूर्वा ,एशियाई महिला निर्देशक उत्सव और परिसंवाद ,का आयोजन जनवरी २००३ में किया जा रहा है |पखवारे भर चलने वाला स्त्री रंग निर्देशकों के काम पर एकाग्र यह महोत्सव भारत और सम्भवता एशिया में अपने किस्म का सबसे बड़ा आयोजन होगा |

पूर्वा ,महिला निर्देशकों को एक ऐसा सामूहिक मंच प्रदान करेगा जहा वे नाटक के छेत्र में अपनी उपलब्धियों का आकलन कर सके |भारत और जैसा कि एशियाई प्रायद्रिप में भी ,स्पष्ट एतिहासिक कारणों से पुरुष वचर्स्व वाले छेत्रो में स्त्रियों को सृजनात्मक स्तर पर भी अपनी जगह बनाने के लिये संघर्ष करते रहना पड़ा है |अब जब उनमे अधिक आत्मविश्वास आया है और इन छेत्रो में उन्होंने निजी अभिव्यक्ति पा ली है तब समय है कि उसका उत्सव मनाया और साथ ही आत्मालोचन किया जाये |इसे इस बात ने भी उत्साहित किया है कि महिलायों के हस्तछेप ने इन छेत्रो में बिलकुल नयी भाषा रची है जो कि पुरुष प्रधान समाज में उनके अनुभवो का साझा लेखा -जोखा किया जाए |

पूर्वा के आयोजको में रंग संसाधन केंद्र नटरंग प्रतिष्ठान और देश कि अग्रणी नाट्य संस्था राष्ट्रीय नाट्य विधालय शामिल है |इस बड़े कार्य में भारतीय सांस्कृतिक सम्बद्ध परिषद् कि भी भागीदारी है |आयोजन को भारत सरकार के महिला और बालविकास विभाग ,जापान फाउन्डेशन ,हिवास (निदरणलैड),आर्ट नेटवर्क एशिया (सिंगापूर)और फोर्ड फाउंडेशन का समर्थन प्राप्त है |

भारत में यह उत्सवऔर परिसंवाद एशियाई महिला और रंगमंच का चौथा अध्याय भी है जिसकी शुरुआत सुश्री को कोहारू किसिरागी ने जापान में १९९२ में एक खुले और शायद उन्मुक्तिकारी प्रयोग के रूप में कि थी |तब से एशियाई महिला और रंगमंच एक छोटा आन्दोलन बन चूका है |ए .डब्ल्यू .टी जो अभी तक रंगकर्म कि सभी विधायो का एक संयुक्त संगठन था अब पूर्वा के साथ रंगकर्म के अधिक सुस्पष्ट और विशिस्ट छेत्रो पर एकाग्र होने कि दिशा में अग्रसर है |

पूर्वा रंगोत्सव 3 से १० जनवरी २००३ को होगा |इसमे कम्बोज ,विएतनाम ,जापान ,मलेशिया ,थाईलैड ,फिलिपिन्स ,और भारत से लगभग २० रंगमडलीया शिरकत

करेगी |नाटक श्रीराम सेंटर सभागार और राष्ट्रीय नाट्य विध्यालय में प्रस्तुत किए जाएगे और इन परिसरों के वैकल्पिक मंचो -स्थानों पर भी |

हर नाट्य प्रस्तुति के बाद अगली सुबह उस पर चर्चा होगी |इस आयोजन में ,जिसमे दर्शक भी शामिल हो सकते है निर्देशक और उनके अभिनेता अपनी दृष्टी ,विधि ,रंग्प्रक्रिया आदि पर बातचीत करेगे ताकि उनकी नाट्य प्रस्तुति कि विधि को समझा जा सके |एशियाई रंगमंच में महिला निर्देशकों के महत्व को देखते हुए यह आदान -प्रदान विशेष रूप से विचारौतेज्क होगा |

शिल्प संग्रहालय के परिसर में ११ से १४ जनवरी २००३ को होने वाले परिसंवाद के लिय ये नाटक पूर्वपीठिका तैयार करेगे |परिसंवाद में प्रवेश निमंत्र्ण से ही सम्भव है उसमे एशिया से लगभग ६०० प्रतिनिधियों के आने कि सम्भावना है |एशियाई अंचल में महिला रंग्निर्देशको को लेकर होने वाला यह अब तक का सबसे बड़ा आयोजन होगा |

<u>पूर्वा महोत्सव के अन्य आकर्षण</u>

इस महोत्सव के अंग के रूप में रंग-उत्सव और परिसंवाद के साथ -साथ महिलाओ कि दूसरी सर्जनात्मक व्रित्यो को भी उजागर किया जाएगा |इसलिए ,तीनप्रदर्शनिया आयोजित कि जा रही है |पहली प्रसिद्ध रंग अभिनेत्रियों के फोटोग्राफ कि ,दूसरी महिला निर्देशकों के काम से सम्बन्धित पोस्टरों कि और तीसरी विभिनं विधाओ में सक्रिय महिलाओ पर केन्द्रित होगी |

क्राफ्ट मुजियम के ,प्रगति मैदान इस आयोजन में १६ महिला शिल्पकारो के काम और शिल्प को विशेष रूप से प्रदर्शित करेगा |कला वीथिका महिला चित्रकारों कि एक विशेष प्रदर्शनी भी इस अवसर पर आयोजित होगी

पूर्वा उत्सव के तहत युवा पीड़ी को उत्साहित करने का काम भी किया जाएगा |दिल्ली के महाविधालय में रंग कार्य शालाएं,वाद -विवाद और किव्ज आयोजित किए जा रहे है |राष्ट्रीय नाट्य विध्यालय को इस आयोजन के लिए विशेष रूप से सजाया जाएगा |उसके अंतर्गत सभी छेत्रो के अलग -अलग कार्नर होंगे जिसमें उनके विशेष भोजन और व्न्य्जनो के अलावा उनकी संस्कृति और शिल्प कि झलकिया भी होंगी |

फोर्ड फाउंडेशन ने इस आयोजन के महत्व को स्वीकार करते हुए पूर्वा में आठ एशियाई -अमरीकी पर्यवेक्षको को आमंत्रित किया है |वे विशेष रूप से इस आयोजन को देंखंगे और भाग लेंगे |मुंबई के महत्वपूर्ण संस्क्रति और क़ानूनी केन्द्र मजलिस ने भी अपनी नाट्य प्रतियोगिता में विजेता दल को प्रोत्साहन स्वरूप में भेजने कि पेशकश कि है |

<u>संस्कृत रंगमंच कि संभावनाए</u>

बीसवी शताब्दी के सातवे दशक से संस्कृत रंगमंच के पुनराविष्कार कि एक क्रन्तिकारी प्रक्रिया का आरम्भ हुआ |एक ओर उज्जैन में नात्याशास्त्रसम्मत नाट्यमंडप के निर्माण और संस्कृत नाटको के भरतसम्मत प्रयोगों का उपक्रम और उनको लेकर विदाव्नो और रंगकर्मियों के बीच विचार विनिमय के साथ बहस कि शुरुवात हुई ,तो दूसरी ओर कावालाम नारायण पणिक्कर जैसे निर्देशकों ने केरल के पारंपरिक नाट्यरूप का विलक्षण कल्पना और दार्शनिक दृष्टि के जुडाव से समायोजन करते हुए संस्कृत नाटको के ऐसे प्रयोग किये जो भारतीय रंगमंच के इतिहास में नया अध्याय रचते है इसके साथ ही ब .व .कारंत ने च्तुर्भानी और मालविकाग्निमित्र तथा रतन थियम ने विक्रमोवर्शीय आदि के प्रयोगों ने संस्कृत नाटको में समकालिकता कि तलाश कि |इन सब प्रयोगों के द्वारा संस्कृत नाटक

आज के रंगमंच से नई अर्थवता के साथ जुड़ता गया है |पिछले दशक से उज्जेन का साहसिक उपक्रम अवश्य कुछ शिथिल पड़ता गया है ,पर संस्कृत रंगमंच कि नई पहचान अब अन्य छेत्रो में हो रहे प्रयोगों में उभरने लगी है

राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान ,नई दिल्ली का कौमुदीमहोत्सव इस दिशा में एक और पहल है |यह पाच साल पहले शुरू हुआ और शुरुवात के वर्षो में वसंतोत्सव के नाम से आयोजित किया गया |राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान ,देशभर में विश्वविध्यालयइन स्तर पर संस्कृत शिछा के लिये अनेक परिसर चलाता है इन में से दस परिसरों से इस नाट्योत्सव में प्रतिवर्ष एक -एक संस्कृत नाटक प्रस्तुत किया गया |इस वर्ष २००७ में आयोजित पाचवे नाट्योत्सव के साथ कुल मिलाकर इस आयोजन में

पचास संस्कृत नाटक खेले जा चुके है |

पचास संस्कृत नाटको का मूल रूप में प्रस्तुत किया जाना इक्कीसवी शताब्दी के पहले दशक कि एक बड़ी घटना है शायद इसे सही परिपेक्ष्य में लेकर रंगकर्मियों और नाट्य समीक्षाको ने यथोचित महत्व नहीं दिया है यह सही है कि इस महोत्सव में दी गई प्रस्तुतिया विधापीठ के छात्रो व छात्राओ द्वरा दी जाती है और उनमे निर्देशन उनके ऐसे अध्यापको का रहता है ,जिनमे से अधिकांश के रंगकर्म का विधिवत प्रशिक्षण प्राप्त नहीं किया है |फिर भी बीसवी शताब्दी में संस्कृत रंगमंच के पुनराविष्कार का जो सार्थक सिलसिला चला ,उसकी यह महोत्सव निश्चित ही अगली कड़ी है इस महोत्सव में अब तक खेले गए पचास मूल संस्कृत नाटको में अनेक ऐसे है ,जो आधुनिक रंगमंच के इतिहास में पहली बार खेले गए |महोत्सव का स्वरूप पतियोगितात्म्क होने और संस्कृत के प्राध्यापकों व छात्र -छात्राओ इससे जुड़े होने से हर बार नया कोई नाटक लेकर आने के लिये हर दल

को तत्पर रहना होता है |इस स्थिति के कारण इस महोत्सव के द्वारा संस्कृत के कतिपय ऐसे नाटको का मंचीय पुन्राविस्कार किया जा सका ,जो संस्कृत रंग

परम्परा के अछूते पहलुओ को उजागर करते है

२००७ का पाचवा नाट्य समारोह २८ ,29 और 30 नवम्बर को एल .टी .जी .सभागार में आयोजित हुआ |इसमें निम्नलिखित नाटक खेले गये -रणवीर परिसर जम्मू द्वारा भास का अविमार्क ,सदाशिव परिसर पूरी ,उड़ीसा द्वारा हरिहर उपाध्याये का भत्रहरिनिर्वेद ,भोपाल परिसर द्वारा वत्सराज का त्रिपुरदाह ,मुमबई परिसर द्वारा रामपारिवाद का मदनकेतु प्रहसन ,गंगानाथ झा परिसर ,इलाहाबाद द्वारा ज्योतिरिशवर का धुर्त्समागत ,श्रीराजिव गांधी परिसर ,श्रृंगेरी ,कर्नाटक द्वारा भास् का अभिषेक ;लखनउ परिसर द्वारा- का _गरली परिसर ,हिमाचल प्रदेश द्वारा राजशेखर कि कपुर् मंजरी ,जयपुर परिसर द्वारा शंखधर का लटकमेल्कम तथा गुरुचायुर परिसर द्वारा मालाविकाग्निमित्रम |

जहा तक मुझे जानकारी है इन नाटको में वत्सराज का त्रिपुरदाह ,राम्परिवाद का मदंकेतुचरित तथा छेमीस्वर का चंडकौशिक समकालीन भारतीय रंगमंच पर संस्कृत में पहली बार खेले गए |इनमे से त्रिपुरदाह तथा चंडकौशिक के द्वारा भारतीय रंगमंच कि परम्परा के अचर्चित पछ सामने आए |त्रिपुरदाह डिम है डिम का रंगमंच नाटक प्रकरण ,प्रहसन या भार के रंगमंच से सर्वथा अलग होता है |

भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र में बताया है कि उन्होंने अपने सौ शिष्यों से सर्वप्रथम दो रुपको के प्रयोग कराए समुद्रमंथन समवकार और त्रिपुरदाह डिम |उस समय तक रंगमंच पर अप्सराए या अभिनेत्रिया अवतरित नहीं हुई थी और न कौशिकी वृति ही अभिनय में जुडी थी |डिम और समवकार दोनों ही रूपक आबिद या तीव्र तथा आवेगमय गति वाले और पौरुष प्रधान रूपक है भरत के अनुसार माया ,इंद्रजाल

तथा पुस्तक कि विधियों का इस्तमाल प्रचुर मात्र में होता है| भरत के समय से लगाकर ईसा के बाद कि शताब्दीयो में त्रिपुरदाह डिम खेलने कि कोई परंपरा रही होगी तभी बारहवी शताब्दी में कलिन्जर के राजा परमदीर्देव (परमाल)के मंत्री वत्सराज ने इस परम्परा को पुनरुज्जीवित करते हुए त्रिपुरदाह के नाम से ही लिखा |वत्सराज ने दुर्लभ रूपक विधाओ में और भी रचनाए कि जैसे रुक्मणीहरण इहामृग ,समुद्रमंथन समवकार या किरातार्जुनीय व्यायोग |त्रिपुरदाह डिम कि कौमुदीमहोत्सव में हुई इस प्रस्तुति के निर्देशक सुज्ञान कुमार मोहान्ती है |वे उड़ीसा के पारंपरिक नाट्यरूपों और उनकी प्रयोग परम्पराओ से परिचित है |उन्होंने अपने सैधान्तिक व प्रायोगिक ज्ञान का बखूबी उपयोग करते हुए त्रिपुरदाह डिम के लिये कौतुकभरे यांत्रिक पद्दति से खड़े गए बहु आयामी मंच कि परिकल्पना कि जिसमे कमल पर विराजे ब्रम्हा का आकाश मार्ग से आना जाना ,राहू के मस्तक का गमना -गमन तथा आकाश में घूमते तीन नगरो के दृश्यबंध खड़े किये गए |शिव उद्ध्रत गतियो के साथ तांडव करते हुए तीनो शहरों के घूमते -घूमते एक रेखा में आते ही एक बाण से उन्हें बींध कर ढहा देते है |तीनो नगरो के धीरे -धीरे आग में झुलस कर धराशायी होने का दृश्य अभूतपूर्व था ,जिसे स्तंभ बनकर करीब एक घंटे तक स्तब्ध खड़े रहे और नगरो के तोरर्ण द्वार सम्भाले हुए छह अभिनेताओ के धीरे -धीरे नीचे गिरने और पृष्टभूमि में आग के दृश्य के द्वारा प्रदर्शित किया गया |यह एक अनोखा नाट्यानुभव था ,हालाँकि संस्कृत नाटको कि प्रस्तुति में यांत्रिक साधनों कि अनावश्यक भरमार कही -कही खटकने वाली भी रही |एल .टी .जी .का रंगमंच भी इतने बड़े द्रिश्यबन्धो के प्रस्तुतिकरण कि दृष्टि से छोटा लगा |

पूरी के परिसर के द्वारा खेला गया भ्त्रहरिनिर्वेद इस नाट्य समारोह कि सबसे महत्वपूर्ण प्रस्तुति कही जा सकती है भ्त्रहरी कि कथा सारे उत्तर व मध्य भारत में कथागायन व लोकनाट्यो के प्रचलित है इस के एक रूप को लेकर पन्द्रहवी

शताब्दी में हरिहर उपाध्याय ने भ्त्रहरिनिर्वेद नाम से एक मार्मिक नाटक कि रचना |इस नाटक का एक हिन्दी अनुवाद मेरे द्वारा किया गया है ,जो नाट्यम अंक

तीन मे प्रकाशित है |हाल ही में पूरी से उद्य्नाथ झा ने इस नाटक का मुकुंद झा बखशी कि सुबोधिनी व्याख्या ,एल ;एच ;ग्रे .के अंग्रेजी अनुवाद और वचनेश मिश्र के हिन्दी पधानुवाद तथा स्वयम कि व्याख्या के साथ एक नया संस्करण प्रकाशित किया है |झा ने अपने संस्करण कि विस्तृत भूमिका में बीसवी शताब्दी में हुए इस नाटक के रंगमंचीय प्रयोगों कि भी चर्चा कि है जिससे स्पस्ट है कि विद्त्समाज में यह नाटक भले ही कम चर्चित या अचर्चित रहा हो ,प्रयोग में रुचि रखने वालो ने इसकी सम्भावनाओ को समझा है |ये स्म्भाव्नाए जीवन कि जटिलताओ और उनसे उनसे उत्पन्न संत्रास के अनुभव से इस नाटक में बनती है |

भत्र हरीनिर्वेद कि इस महोत्सव में हुई प्रस्तुति में वाचिक कि प्रभावशालिता पूरे प्रकर्ष पर थी |और वैराज्ञ के अनुभव को अभिनेता लछेमीधृ पंडा ने वाचिक के गहरी अनुभूति से सम्पन्न प्रयोग के द्वारा सम्प्रेषित किया |श्रृंगेरी के कलाकारों द्वारा प्रस्तुत भास् के अभिषेक में बाली और सुग्रीव के युद्ध तथा मरना सन्न बाली के दृश्य में आंगिक ,वाचिक और सात्विक अभिन्यो कि अपार सम्भावनाए उजागर हुई |

इन सभी मंडलियो के निदेशक अपने -अपने चेत्र के पारम्परिक नाट्यरूपों से परिचित लगे |विशेष रूप से जम्मू कि मंडली के धेर्मेंद्रकुमार ,जयपुर के रमाकांत पांडे तथा उज्जेन के कालिदास समारोह कि नाट्य प्रस्तुतियों के सम्पर्क तथा अपने चेत्र में होने वाली नाट्य विषयक गतिविधियों के प्रत्य्च अनुभव को अपने निर्देशन में सार्थक रूप से प्रमारित किया धूर्तसमागम और लटकमेल्कम कि प्रस्तुतियों के संस्कृत प्रहसन अपने पूरे भदेसपन और दुधारी भाषा के साथ मौजूद था ,जबकि

गुरुवायुर और श्रृंगेरी कि प्रस्तुतियो के द्क्चिन कि नाट्य परम्परा का वैभव पहचाना जा सकता है |तीनो दिन खचाखच भरे एल .टी .जी .सभागार में दर्शक समाज में देश्भर में संस्कृत विध्यापिठो के प्राध्यापको और विध्य्र्थी तथा दिल्ली के संस्क्रित्ग दर्शक थे ,जो प्रत्येक नाटक के एक -एक संस्कृत संवाद का रस ले रहे थे

इस समारोह में प्रतियोगिता के बाहर याच्गान के प्रशिचित कलाकारों द्वारा दो महत्वपूर्ण याख्गान प्रस्तुत किए गये पहला -वेंकटेष मूर्ति का कौर्वोव्म तथा दूसरा श्रृंगेरी के विद्यापीठ के द्वारा -पौराणिक आख्यानो कि प्रस्तुति के लिए य्च्गान कि विद्या कितनी समर्थ है -यह बात सिध्हस्त कलाकारों के इन प्रयोगों से साफ़ समझ में आई |

निश्चित रूप से राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान का यह ,आयोजन भविष्य में राष्ट्रिय संस्कृत नाट्य महोत्सव का एक सार्थक और गरिमापूर्ण स्वरूप प्राप्त कर सकता है |७से १२ फ़रवरी तक भारतेन्दु नाट्य अकादेमी ने राष्ट्रीय नाट्य समारोह गन्ना संस्थान प्रेचाग्ढ़ लखनऊ में आयोजित किया |इस समारोह कि शुरुआत कालिदास के प्रसिद्ध संस्कृत नाटक मालविकाग्निमित्रम से हुई |भगवत शरण उपाध्याय द्वारा अनुवादित इस प्रस्तुति का निर्देशन सूर्यमोहन कुलश्रेष्ठ ने किया (जो रंगकर्म में थोड़ी बहुत रूचि रखने वालो के लिये भी किसी परिचय के मोहताज नहीं है)निर्मला (मालविका)व शाश्वत दीप (राजा अग्निमित्र)समेत सभी प्रमुख कलाकारों का अभिनय संतुलित और रवि नागर का संगीत नाटक के मुड के मुताबिक था |दो पत्नियों धारिणी व इरावती के होते हुए भी राजा अग्निमित्र का मालविका को हासिल करने के प्रयास नाटक में सहज हास्य उत्पन्न करते है ८ फरवरी को इप्टा मुम्बई कि प्रस्तुति गिरिजा के सपने (नाटककार बी सुरेश \अनुवाद शैलजा)में वरिष्ट नाट्यकर्मी व फिल्म निर्देशक एस .एस .सथ्यु का स्टेज क्राफ्ट का जादू एकबार फिर सिर चड़कर बोला |

गाव कि इकलौती १० वी फेल शिचित गिरिजा फिल्म और विज्ञापनों कि चकाचौंध से काफी प्रभावित है |हलाकि वो सपने तो फ़िल्मी हीरो के ही देखती है मगर उसकी शादी होती है एक सीधे -सादे ग्रामीण राजू से |सपनों और सच्चाई के बीच टकराव होता है तभी मायावी शक्तिया बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के रूप में सामने आती है और राजू \गिरिजा कर्ज के म्क्रजाल में फस जाते है |विदेशी बीज व खाद के फेर में उनकी खेती चौपट हो जाती और अनंत राजू फासी लगाकर जान दे देता है |पर गिरिजा हालात से जूझते हुए अपनी लड़ाई नये जोश के साथ अकेले लड़ने का संकल्प लेती है |किसानो कि त्रासदी और विदेशी कम्पनियों से अगाह करने का गुड़ संदेश निश्चित ही सथ्यु बेहद असरदार ढंग से देने में सफल रहे | अलग - अलग चरित्रों को दर्शाने के लिए संगीतकार कुलदीप सिंह ने समूह गान व कोरस का इस्तेमाल बेहद खूबसूरती के साथ किया ,जो नाटक को गति देने के साथ ही दर्शको के लिए मनोरंजक अनुभव भी है |दिलचस्प बात यह रही कि सथ्यु साहब कि रंगकर्म कि परम्परा कि डोर अब उनकी बेटी शैली ने थामने कि तैयारी कर ली है |सथ्यु साहब खुद लखनऊ नहीं आये थे |गिरिजा के सपने कि प्रस्तुति संयोजक शैली सथ्यु थी |९ फरवरी को रंगकर्मी कोलकाता ने काशीनामा का मंचन किया |काशीनाथ सिंह कि कहानियों पर आधारित इस नाटक का रूपांतरण व निर्देशन देश कि प्रमुख नाट्यकर्मी ऊषा गांगुली ने किया इसमें ऊषा गांगुली काशी के घाट और वहा छोटे -छोटे स्वार्थो के खातिर बदलते पंडा धर्मशास्त्री के मनोभावों को बखूबी दर्शाने में कामयाब रही |११ फरवरी को नया थियेटर भोपाल ने बुजुर्ग रंगशिल्पी हबीब तनवीर के निर्देशन में रविन्द्रनाथ टेगोर कि कहानियों -विसर्जन और राजश्री -पर आधारित नाटक राजरक्त का मंचन किया |इस नाटक में हबीब दा ने सत्ता व व्यक्ति के रूप में राज्य और धार्मिक प्रतिष्ठानो के द्वंद को सशक्त तरीके से प्रस्तुत किया |निर्देशक हबीब तनवीर ने संगीतकार के रूप में हारमोनियम ,झांझ ,नगाड़ा ,तबला ,ढोलक व मंजीरा कि धुनो पर कोरस का बेहद

अभिनव प्रयोग किया |१२ फरवरी के समारोह कि अंतिम प्रस्तुति थी आज थिएटर कम्पनी दिल्ली का नाटक तेजी बरार| हेनरिक इब्संन कि कृति हड्डा गेब्लर पर आधारित सिन्धु मिश्रा द्वारा रूपांतरित इस नाटक में निर्देशक भानु भारती ने तेजी बरार (सिंधु मिश्रा)के माध्यम से निराशा के बीच दम तोड़ती एक औरत कि पीड़ा को बखूबी दर्शाया है रवि नागर का संगीत नाटक के विविध भावो को प्रतिबम्बित करने में मददगार साबित होता है |१६ फरवरी को मुम्बई कि नाट्य संस्था 'यात्री .ने रविन्द्रालय ,लखनऊ में पूनम ढिल्लो अभिनीत चर्चित नाटक द परफेक्ट वाइफ का मंचन किया |इसमें फिल्म ऐक्ट्रेस पूनम ढिल्लो (अपनी वही नूरी वाली)और लिलिपुट का अभिनय काफी प्रभावशाली रहा |शो में दर्शक भी खूब थे |हालाकि यह टिकट शो था और आयोजन असहाय बच्चो के लिए कार्य कर रही संस्था सर्च फाउंडेशन के सहायतार्थ किया गया था |

२७ मार्च को विश्व रंगमंच दिवस के मौके पर वरिस्ठ रंगकर्मी शंभू व तृप्ति मित्र कि बेटी शाओली के नाट्य दल पंचम वैदिक ने नाथवती अनाथवत का मंचन भारतेंदु नाट्य अकादेमी के बीएम प्रेचाग्य्ह में किया |अभिमंच कला एकांश व बिएनए के संयुक्त प्रयास से मंचित यह नाटक शाओली ने २५ साल पहले बांगला में लिखा था मगर देश के विभिन्न हिस्सों से जब इसके हिन्दी में मंचन के प्रस्ताव आने लगे तो उन्होंने खुद ही इसका रुपान्तर्ण किया |नाटक कि शुरुवात कुछ बाते कहना चाहे जो मन, से होती है ,इसके बाद मंच पर मौजूद शाओली उस द्रौपदी कि कथा आरम्भ करती है जिन्हें व्यास मुनि ने नाथवती अनाथवत कहा और जिसने जीवन भर असहय यंत्रणाए सही |कथा सुनाते समय शाओली हर प्रसंग के अनुकूल असाधारण अभिनय करती है |द्रौपदी जब ससुराल पहुचती है तो सास कुंती ने बेटो से कहा जो लाए हो आपस में बाट लो |इसके बाद शाओली दर्शको से सवाल करती है कि सोचिए एक बार द्रौपदी से किसी ने उसकी इच्छा पूछी तक

नही |क्या आज भी स्त्री कि इच्छा कि परवाह इस पितृसतातमक समाज में कि जाती है ?नाटक में द्रौपदी का अभिनय कर रही शाओली का एक और सवाल भी मन को उदेलित करता है कि धर्मराज ने किसको पहले दाव पर लगाया था ?मुझे या स्वंय को ?यदि स्वंय हार गए थे तो वे दुसरे को कैसे दाव पर लगा सकते है ?खुद शाओली के लिखे गीत व उनका संगीत प्रस्तुति का सबल पछ है |बिना तामझाम कि इस अर्थपूर्ण रंग प्रस्तुति को दर्शक \कलाप्रेमी लम्बे समय तक याद रखेंगे |

संगीत नाट्य एकेडमी द्वारा आयोजित ये नाट्य समारोह बहुत लोकप्रिय रहा है|

इस समारोह में देश के जाने मने रंग निर्देशकों ने अपने नाटक कि प्रस्तुतुतिया किया था जो कभी लोकप्रिय हुआ राजधानी में रंगमंचीय स्थिति को देखते हुए अक्सर यह कहा जाता था कि रंगमंच दम तोड़ रहा है और उसके पास दर्शक का आभाव है पर ऐसा नहीं है ,रंग स्वर्ण . नाट्य उत्सव हुआ तो इनमे ऐसी कई प्रस्तुति थी जिन्हें देखने के लिये भरी भीड़ उमड़ी लोगो के इस उत्साह और उत्सुकता को देख कर आयोजको को कुछ अतिरिक्त प्रस्तुतिया कि व्यवस्था करनी पड़ी |साथ ही इस दौरान कई प्रस्तुतिया को बीच में ही छोड़ कर चले गए ,इससे यह प्रतीत होता है कि वस्तुतः दर्शको का आभाव नहीं बल्कि उनके रूचि और संवेदनाओ के हिसाब से अच्छी प्रस्तुति का आभाव है देखा जाय तो यह एक सकारात्मक स्थिति है ,निश्चय ही अच्छी प्रस्तुतिय कि पृठभूमि में उसके निर्देशकों ,अभिनेताओ और मंच परिकल्पको कि महत्पूर्ण भूमिका होती है और हर प्रस्तुति के बाद नाटक में कुछ न कुछ परिवर्तन और नयापन आता है |

२१सदि के प्रथम दशक में दिल्ली रंग मंच का बहुत बिस्तार हुआ इस समय में कई रंग निर्देशक भी हुए जिन्होंने कभी अच्छा कार्य किया , और इन्होने कभी नई

नई तकनिकी को खोजा और अछे से इस्तेमाल किया जो कि रंगमंच को विस्तार देने में सहायक सिद्ध हुआ | कई प्रस्तुति हुई को काफी काबिले तारीफ है| रंग स्वर्ण में कई नाटक ऐसे भी थे जिसमे फिल्म के कई बड़े कला करो ने भाग लिया जैसे कि अनुपम खेर ,अमरीशपुरी नाशिरुद्दीन आदि कई जाने कलाकारों ने हिस्सा लिया |

साहित्य कला परिषद् द्वारा आयोजित भारतेंदु नाट्य समारोह हर साल करता है इसमे दिल्लीके अच्छे नाटक होते है उसे भारतेंदु नाट्य समारोह नाट्य समारोह में होता है |साहित्य कला परिषद् मोहन राकेश नाट्य समारोह भी किया करती थी| जजों बहुत चर्चित उत्सव हुआ करता था |

नाट्य समारोह के नाटक

श्री राम सेंटर नाट्य उत्सव

नाटक	निर्देशक
कोसी का घटवार	एन .के.पन्त
बादशाहत का खत्मा	मुश्ताक काक
डोर बेल	निरीत आर. पाणिग्रही
जादू भरा गीत	जीतेन्द्र सिंह
सड़क के किनारे	मुश्ताक काक
महाब्राह्मण	मुश्ताक काक

तुरुक का पत्ता	बापी बोस

जर्मन महोत्सव

द टेम्पेस्ट	एन्नेट लिडे
हेनरी पंचम	फ्रंजिसका सिटआफ
द रजीसित्बल राइज ऑफ आर्तुरो	हैरान मूलर
ए फैंड फार बोल्टन	एरिक शैफ्लर

दिल्ली एक्सिपरिमेंट थिएटर (लघु नाट्य समरोह)

काग भगोड़ा	ओम चेरी
घर घर चोर	ओम चेरी
कल यन्त्र	इंदिरा पार्थसारथी
माधवी	एच एस शिव प्रकाश
येशुवं जनम	एच बी शर्मा
मंदिर का हाथी	आशिफ अली

नेशनल इंस्टीटयूट परफमिंग आर्ट

तेंग्थाखोल (मणिपुरी)	प्रस्तुति इंफाल कल्चर क्लब
थालकोह (मणिपुरी)	प्रस्तुति मा उन्ट कारमेल स्कूल

सीकिंग एन आन्सर	प्रस्तुति लौतेरोक कल्चर
चमकौर दी गढ	प्रस्तुति इंस्टीटयूट ऑफ प्रोग्रेसिव आर्ट चंदिगढ

साहित्य कला परिषद्

लड़ी नजरिया	चितरंजन त्रिपाठी
ययाति	बिपिन कुमार
गैर जरुरी लोग	सुमन कुमार
रोमियो जूलियट और अँधेरा	अरविन्द गौड
इस कमबख्त साठे का क्या करे	राजिन्दर नाथ
आजादी कि दस्तक दी	सुधन्वा देशपाण्डेय
और कितने टुकड़े	कीर्ति जैन
दीवार में खिड़की रहती है	मोहन महर्षि
चारपाई	अलखनंदन
नरभक्षी	सुरेन्द्र शर्मा
कह रैदास खलास चमारा	राजेश कुमार
लाखटाकिया हाथी	सतीश आनंद
दीदी ठाकुरान	सतीश आनंद
त्रेम्पल ऑफ डेथ	कविता बागपाल

आय एम् नॉट शेख चिल्ली	अविजीत दत्त
बिछड़े प्राणी	मदानवाला सिन्धु
आक्सर मैंने सोचा है	एन के शर्मा
आलादाद	मुश्ताक काक
तारा	अरविन्द गौड़
बर्बरीक उवाच	सुरेन्द्र शर्मा
यात्रा दर यात्रा	देवेन्द्र राज अंकुर
मुझे अमृता चाहिये	मुश्ताक काक
तट निरंजन	अरविन्द गौड़
मी.राइट	संजीव जौहरी
और अगले साल	सुरेश भारद्वाज
नेपथ्य राग	भारती शर्मा
मै इन्स्ताबुल हूँ	मोहन महर्षि
जवाल ए आजीम	तड़ित मित्र
कन्यादान	रोवोजिता गोगोई
बिखरे बिम्ब	राजिंदर नाथ
ग़ालिब	एम् सईद आलम

परम पुरुष	बापी बोस
धोबी घात से मसान घाट तक	बंसी कौल
कोर्ट मार्शल नहीं	चितरंजन त्रिपाठी
बांध टूटने दो	सतीस आनंद
चरणदास चोर	हबीब तनवीर

उर्दू आकादमी

आमानत कि लाठी	रवि तनेजा
कंजूस	मुस्ताक काक
१८५७ कि दिल्ली	महेश्वर दलाल
आर यू आर	फैयाज अहमद
उमराव जान	केवल धारीवाल
मै मंटो हु	मुश्ताक काक
शीशे के खिलौने	नगमा ज़फिर
ज़हर कांद	सुमन कुमार
गैर ज़रूरी लोग	दिनेश खन्ना
अक्ल बड़ी या	अजय मनचंदा

नट सम्राट

कम्बखत इश्क	श्याम कुमार
बड़े भाई साहब और सुदामा के चावल	एन .के. पन्त
पति गये रे काठियावाढ	अजीत चौधरी
पंछी ऐसे आते है	बासब भट्टाचार्य
चीफ मिनिस्टर	इफरा मुस्ताक काक
आपरेशन थ्री स्टार	अरविन्द गौड़
सूर्य कि अंतिम किरण से पहली किरण तक	दीपक आच्छानी गजराज नगर
बिच्छु	सुमन कुमार
कल कालेज बंद रहेगा	रवि तनेजा
वेडिंग फार गोड़ो	वासिम अहमद
कल्लू नाइ ऍम बी बी एस	श्याम कुमार
बीबियो का मदरसा	फरीद अहमद
क्या करेगा काजी	श्याम कुमार
मेयर टेक केयर	श्याम कुमार
कौवा चले हंस कि चाल	श्याम कुमार
मोटेराम का सत्याग्रह	अरविन्द गौड़

बुरे फसे	सत्य प्रकाश
एक मशीन कब्बडी का	दिनेश आहलावत

राष्ट्रीय नाट्य विधालय समारोह

बाणभट्ट कि आत्मकथा	एम्.के .रैना
शार्टकट	रंजित कपूर
उत्तररामचरित्र	प्रसन्ना
मेमसाहब पृथ्वी	रबिजिता गोगोई
अन्तराल	रंजित कपूर
सीमा पार	प्रसन्ना
काफ्का एक अध्याय	सुरेश शर्मा
घासीराम कोतवाल	राजिंदर नाथ
राम नाम सत्य है	चेतन दातार
जानेमन	वामन केन्द्र
अनाम दास का पोथा	रोबिन दास
राजा कि रसोई	मोहन महर्षि
राश्ते	सत्यदेव दुबे

घाशीराम कोतवाल	राजिंदर नाथ
ध्रुवस्वामिनी	रविजिता गोगई
ताजमहल का टेंडर	चितरंजन त्रिपाठी
भूख आग है	राम गोपाल बजाज

संगीत नाट्य अकादमी

मुक्ति	उषा गांगुली
बेगम जान	नादिरा ज़ाहिर बब्बर
अप्प्वुम पिल्लुवं	बी अरुमुगम
घुमाई	बलवंत ठाकुर
5 मिनट ऑफ मिसिज चटर्जी	सीमा अग्रवाल
राजद्रोही गीता बनर्जी	

पृथ्वी थिएटर समारोह

कामेडियन डेल आर्ट गैलेरी	मार्को लूली
सकीना मंजिल	जैमिनी पाठक
पीली स्कूटर वाला आदमी	मानव कौल
बांसुरी	सुनील संवांग
गाँव का नाम ससुराल मौर नाम दामाद	हबीब तनवीर

पोंगा पंडित	हबीब तनवीर
आगरा बाज़ार	हबीब तनवीर

<u>कौमुदी महोत्सव संस्कृत नाटक</u>

गौरी दिगम्बर प्रहसनम	गंगा नाथ झा परिषद्
सीताच्छायम	भोपाल परिषद्
भाग्वाद्ज्जुकियम	नीपारंगमंडली लखनऊ
प्रतिज्ञायोगंध्नारायण	जयपुर परिषद्
रत्ना वाली	गरली परिषद्
राष्ट्ररक्षति रक्षितं	के जे सोमैया मुंबई
पंचकल्याणी	गुरुवायुरू परिषद्
ज्ञक्षगानम	मुख्यालय नई दिल्ली
सावित्रीभीनय	रणवीर परिषद्
उत्तररामचरित्र	सदाशिव परिषद्
आविमारक	रणवीर परिषद्
त्रिपुरदाह	भोपाल परिषद्
मदनकेतु चरित्र	मुंबई परिषद्

अभिषेकनाटकम	राजीव गाँधी परिषद्
लटक्मेलाकम	जयपुर परिषद्

हिन्दी आकादमी

बिदेसिया	संजय उप्पाध्याय
चन्द्रगुप्त	नवरत्न गौतम
मिटटी की गाड़ी	राम जी बाली
जिस लाहौर नहीं देख्या ओ जम्या नई	राजिंद्रे नाथ
परती परिकथा	संजय उपाध्याय

मौलोरंग

कमाल्मुखी कनिया	प्रकाश झा
ओकरा आँगन बारहमासा	महेंद्र मलंगिया
जल डमरू बाजे	प्रकाश झा
पांच पत्र	उत्पल झा

ड्रामेटिक आर्ट एंड डिज़ाइन आकादमी इब्सन फेस्टिबल

मेत्रोपोलिस	अमाल अल्लाना
सम स्टेज डायरेक्शन फॉर हेनरिक	जुलेखा चौधरी

लेडी फ्राम द सी	ज्योतिष एम् जी
द मास्टर बिल्डर	शांतनु बोष
द कन्युनिकेटर	कमाल्लुद्दीन नीलू
नोराख डोर्स	नोरा आमीन
ड्रौनिंग	मिरजम कोइन
द डिवियल शिप	आतिला पेस्यानी
हेड गैब्लर	जी ताओ जान मिन
पिलर्स ऑफ द कम्युनिटी	नीरज कवी

तृतीय चरण

2001 से 2010 तक प्रस्तुतियों का समीक्षाये एवं अध्धयन

दिल्ली भारत कि राजधानी होने के कारण यहाँ बहुत से नाटक होता है दिल्ली और दिल्ली से बहार भारत के कई प्रदेशो यहाँ तक कि विदोशो से भी बुत से नाटक आते है दिल्ली में उनका प्रदर्शन होता है 2001 से 2010 के बीच बहुत से नाटक नाटक हुए है| रंगमंच में राष्ट्रीय नाट्य विधालय ,संगीत नाटक एकेडमी ,साहित्य कला परिषद्,श्री राम सेंटर फॉर परफमिंग आर्ट्स,लिटिल थिएटर ग्रुप,अनंत ,अजोजा थिएटर, आस्मिता ,इम्प्रेसिव , क्षितिज ,नटखट ,नटरंग,पर्वतीय कला केंद्र ,बहुरूप

,दिगंत आदि कई ग्रुप का बहुत योगदान रहा है |दिल्ली चूँकि भारत कि राजधानी है इसलिए दिल्ली का रंगमंच राज नैतिक और सांस्कृतिक रूप से बहुत सक्षम है|

पूर्वी एशियन नाट्य समारोह ,पृथ्वी थिएटर नाट्य समारोह,रंग स्वर्ण में दिल्ली में पूर्वा नाट्य उत्सव का अयोजन् हुआ था जिसमे बहुत ही अच्छे और नए तरह के नाटक हुए है | कई ऐसे भी नाटक हुए जो कि हमारे अपने समाज कि ही विषय वस्तु है |

यह तो सही है कि नाटक अपनी विषयवस्तु का चुनाव समाज के भीतर से करता है और प्रस्तुति के माध्यम से उस विषयवस्तु को पुनः समाज को ही लौटा देता है | लेकिन ऐसा बहुत कम होता है कि समाज के जिन वास्तविक पात्रो और चरित्रो से नाटककार प्रेणना लेता है वही चरित्र दर्शक दीर्घा में बैठकर उस नाट्य प्रस्तुति को देख रहा हो जिस घटना का मै उल्लेख कर रहा हु उसके साथ ऐसा ही कुछ जुडा हुआ है २३ जुलाई २००४ राष्ट्रिय नाट्य विघालय के तृतीय वर्ष के छात्रो ने अपनी एक नाट्य प्रस्तुति कौन थाग्वानागारिया लुटल हो प्रस्तुत कि |यह नाटक काशीनाथ सिंह कि इसी नाम कि रचना का अजय कुमार द्वारा किया गया नाट्यरूपांतरण है ,जिसे कीर्ति जैन ने निर्देशित किया था | मूल रचना काशी कि अस्सी शीर्षक कहानी और संस्मरणनुमा उपन्यास का आखिरी खण्ड है | इस कहानी कि सभी कहानिया और खण्ड काशी के सुप्रसिद अस्सी घाट पर रहने वाले सुबह से शाम बिताने वाले जीते जागते पत्रों से सम्बंधित है नाट्य प्रस्तुति में में यदि जीवन कि अभिव्यक्ति हुई है तो अपने रूप में ही छद्म ,झूठे और बनावटी नाम का सहारा नहीं लिया गया |

भास ने अपने दो नाटको प्रतिमानाटक और स्वप्नवासवदत्ता में नाटक के भीतर नाटक वाले दृश्यों कि रचना कि पहले स्वप्नवासवदत्ता के उस दृश्य को ले जिसमे

वासवदत्ता पद्मावती के माथे पर लेप करने के लिये समुद्रग्रह में जाती है | वहा उदयन पहले से सोया है और वह उसे पद्मावती समझ कर उसके बगल में लेट जाती है उदयन स्वप्न में वासवदत्ता को याद करता है | जरा विचार किया जय कि कितना नाटकीय दृश्य है स्वप्न किसके लिये? उदयन या वासवदत्ता के लिये स्वप्न ही यथार्थ अथवा यथार्थ ही स्वप्न है |इससे थोडा अलग रूप में प्रतिमानाटक के उस दृश्य को देख सकते है , जब चित्रवीथिया में लगे चित्रो को देखते देखते भारत अतीत में चला जाता है और वो सरे चित्र उनके सामने जीवंत और साकार हो उठते है | इन सभी नाटको से अलग कालिदास का अभिज्ञानशाकुन्तल का वह दृश्य अपनी अलग पहचान रखता है ,जब शकुंतला दरवार में दुष्यंत के सामने खाड़ी है और वो उसे पहचान नहीं पाता | यह सही है कि दुर्वासा के शाप और अंगूठी के खोने से नाटककार ने दुष्यंत कि विस्मृति के लिये एक तार्किक आधार प्रस्तुत करता है , लेकिन दर्शक के लिये दृश्य का तनाव ,रहस्य ,उत्सुकता फिर भी कम नहीं होती | न पहचाने जाने का संकट ,अपने ही घर में अजनबी होने का अहसास नाटक अचानक कितना आधुनिक और समकालीन दिखाई देने लगता है |यही पर जय शंकर प्रसाद का नाटक ध्रुवस्वामिनी भी याद आ जाता है , जब एक जैसा वेश में चन्द्रगुप्त और ध्रुवस्वामिनी खिंगल के सामने जाते है | कौन है आसली महरानी ?ध्रुवस्वामिनी स्वयं अथवा उसके वेश में चन्द्रगुप्त ? खिंगल इसी गुथी को सुलझाता रह जाता है और चन्द्रगुप्त के हाथो मारा जाता है |

नाटको कि साम्कलीनता

राष्ट्रिय नाट्य विधालय छात्रो व्दारा डॉ. अंजलि महर्षि के निर्देशन में प्रस्तुत भास् के माध्यम व्यायोग को देखते हुए बड़ी शिद्दत से यह महसूस कि जिन नाटको

को हम पुराने,रूडिवादी और सपाट से दिखनेवाले नकारते रहते है , वो अपने आप में कितने जाटील और आश्चर्यजनक रूप से उतने समकालीन भी है |

उदहारण के लिए माध्यम व्यायोग को ही ले | उपरी तौर पर देखने से इसकी कहानी बहुत सीधी साधी जान पड़ती है केशवदास ब्राह्मण अपनी पत्नी और तीन बेटो के साथ जंगल से गुजर रहा है कि उसका सामना हिडिम्बा के पुत्र घटोत्कच से होता है | घटोत्कच को अपनी माँ के आहार के लिये मनुष्य चाहिये और वह ब्राह्मण के तीनो बेटो में से एक चाहिये सबसे पहले बड़ा बीटा अपने आप को प्रस्तुत करता है लेकी पिता उसे छोड़ने को तैयार नहीं सबसे छोटा बेटा माँ को बहुत प्रिय है इसलिए वो उसे छोड़ने को तैयार नहीं अंततः मध्यम पुत्र को घटोत्कच के साथ जाना पड़ता है , यधपि कहानी इससे आगे भी बढती है लेकिन हम यही पर रुककर इस छोटे से कथांश का विश्लेषण करते है क्या नाटक का जो कथानक है वो अपने आप में सम्पूर्ण है अथवा वह उससे आगे कि भी नई नई अर्थ छायाए प्रस्तुत करता है क्या ये बिलकुल आज का नाटक नहीं है यदि हम उसे मध्यवर्ग के त्रासदी के साथ जोड़कर देखे | उच्चवर्ग एक तरफ दूसरी तरफ निम्नवर्ग है और उसके बीच में फंसा हुआ मध्यवर्ग जो न तो अपने स्तर से उपर उठ पा रहा है और न नीचे गिरने को तैयार है | इस तरह माध्यम व्यायोग कि कितनी ही समकालीन व्याख्या प्रस्तुत कि जा सकती है |मात्र कथ्य ही नही प्रस्तुति शैली के स्तर पर भी यह नाटक बेहद समकालीन होने लगता है |इसकी प्रस्तुति में निर्देशक ने न तो उस रूढ़िवादी शास्त्रीय शैली का अनुसरण किया जिससे आज के दर्शक कि समझ और समवेदना का कोई ताल्लुक नहीं है और न ही उस यथार्थवादी शैली को अपनाया जिसे हम आज के नाटको में प्रयोग करने के आदि है इसकी वजह निर्देशक ने शास्त्रीय और यथार्थवादी शैली के बीच एक शैली निर्मित कि जो आज के दर्शक के लिये पूरी तरह से ग्राहां थी |इसी परिपेक्ष्य यदि

हम दुसरे संस्कृत नाटको को देखे तो भ उतने समकालीन जान पड़ते है | उदाहरंके लिये भास के ही उरुभंग में युध्द को भयावहता और उसके परिणाम से उत्पन्न स्थितियों कि निर्थकता का आकलन किया गया है ,वही स्वप्नवासवदत्ता में एक मंत्री राजनितिक दृष्टि से अपने स्वामी के राज्य का विस्तार करने के लिए पुरे एक षड्यंत कि रचना कर डालता है | क्या ये सारी घटनाये कही आज के हमारे सामने घटित होती नहीं दिखाई देती ? स्त्री पुरुष संबंधो को ले तो हम उन्हेऔर भी ज्यादा अपने वर्तमान समय के निकट अनुभव करने लगते है |म्रिच्छ्कटीकम में एक ब्राहमण व्यापारी और एक गणिका बसंत्सेना का प्रेम सम्बंध और अंत में एक साथ रहने का निर्णय क्या किसी आधुनिक प्रेम कहानी से कमतर ठहरता है ? अभिज्ञानशाकुन्तल में नाटक अंत में शाकुंतल व्दारा दुष्यंत कि अंगूठी का आस्विकार उस नाटक को कितनी सार्थकता और समसामयिकता प्रदान कर देता है | मुद्राराक्षस में एक विरोधी पक्ष के योग्य मंत्री को अपनी तरफ लाने के लिए चाणक्य व्दारा रचा गया षडयंत्र क्या हमें बिलकुल आज का नहीं लगता यह तथ्य स्वयंसिध्द है कि जब कोई रचना शाश्वत समस्याओ और प्रश्नों को अपने कथ्य के लिये उठाती है तो वह किसी कि शैली में क्यों न लिखी गयी हो उन दर्शको के लिए हमेशा समकालीन रहेगी जिनके सामने उसका मंचन हो रहा है |

रंग -कर्म का रंगारंग स्वरूप

रंग -प्रक्रिया के विविध आयाम शीर्षक पढकर आशा जाग्रत होती है कि साहित्य की जिस विधा पर आलोचकों ने सर्वाधिक कृपणता से काम लिया है उस पर कुछ सुनियोजित ढंग से काम किया गया होगा |भूमिका पर एक नज़र डाल कर ऐसा लगता है मानो इस पुस्तक में संकलित सभी लेख एवं टिप्पणीया किसी विचार -

गोष्ठी के वैचारिक बिंदु है परन्तु जरा आगे बढने पर पता चलता है कि कुछ लेख सातवे -आठवे दशक में लिखे गये थे |इस का कारण सम्भवतः यह है कि जो विद्वान हरियाणा के यमुना नगर में स्थित डी .ए .वी गर्ल्स कॉलेज में आयोजित संगोष्ठी में निमंत्रित होने के बावजूद न आ सके उन्होंने अपने पहले कभी लिखे हुए लेख इस संकलन के लिये भेज दिए |संजीव चौधरी का लेख , साठोतर हिन्दी नाटक ;वस्तुगत विविध प्रयोग ,इसी कोटि की रचना है |लिहाजा आधे -अधूरे (मोहन राकेश),आठवां सर्ग (सुरेन्द्र मोहन),त्रिशंकु (ब्रजमोहन शाह)तथा पोस्टर (शंकर शेष)तक पहुचकर चर्चा समाप्त हो जाती है

हिन्दी रंगमंच का इतिहास -लेखन

सन २००४ का वर्ष राष्ट्रीय नाट्य विधालय (रानावी)का भारत रंग महोत्सव चल रहा था |अभिमंच प्रेक्षाग्रह में क्षमता से डेढ़ -दो गुना लोग बैठे हुए तल्लीनता से एक पारसी नाटक ,यहूदी कि लडकी ,कि प्रस्तुती देख रहे थे |मंच से शेर के मिसरे बोले जाते थे ,दुसरे मिसरे का आखरी हिस्सा जवाब में नीचे बैठे श्रोताओं कि ओर से वापिस मंच कि ओर उछाल दिया जाता था |बहुत पहले काल के गाल में समा चुकी इस विधा का सिर्फ नाम भर सुन कर खचाखच भरे प्रेक्षाग्रह में इकट्ठा हुआ दिल्ली के दर्शको का ,वंस मोर ,,वंस मोर ,कि आवाज लगाता समूह डेढ़ सौ वर्षो पुरानी वही चवन्निया अंदाज वाली परम्परा निभा रहा था ,जिसमे नायक के मरने के दृश्य को बार -बार देखने के लिये दर्शक लगातार ,वंस मोर ,कि रट लगाए रखा करते थे ,और कितनी बार ,वंस मोर ;कि टेर लगी ,इसे नाटक कि सफलता का पैमाना माना जाता था |

पारसी रंगमंच कि अतिरंजनापूर्ण शैली और नौटंकी के भौड़ेंपन और अश्लीलता पर चाहें लाख नाक -भौ चिढाये ,परन्तु उपरोक्त दो ही उदाहरण इस चीज के पर्याप्त उदाहरण है कि पारसी नाटक और नौटंकी का नाम भर ही आज भी दर्शको कि रंगो में जोश भर देने के लिए पर्याप्त है |

ऐसे में पिछले कुछ वर्षो में इन दोनों विधाओ पर अनेक किताबो का छपना आश्चर्यजनक नही है | वास्तव में ,हिन्दी कि इन दोनों नाट्य -शैलीयो पर जितना काम होना चाहिये था ,उसका शतांश भी नही हो पाया है ,इसलिए इन पुस्तको का प्रकाशन स्वागत योग्य है | इनमे से रानावि द्वारा प्रकाशित दो पुस्तके ,मेरा नाटक काल ,(२००४)तथा ,बेताब चरित ,(२००२)पारसी नाटको के दिग्गज नाटककारो ;राधेश्याम कथावाचक और नारायण प्रसाद ,बेताब ,कि स्वरचित आत्मकथाए है ,जो इन लेखको कि अपनी जीवनिया कम और पारसी रंगमंच कि जीवनी का हिस्सा अधिक बन गई |

,स्त्री कि दयनीय दशा ,और ,भयंकर जातिवाद ,जैसे सामाजिक विकारो कि विकरालता काफी हद तक आज के आधुनिक (पश्चिमी)तौर -तरीको से शिक्षित ,तथाकथित सम्भ्रान्त वर्ग के दिमाग कि ही देन अधिक है |यह एक विचित्र किन्तु यथार्थपूर्ण तथ्य है कि आधुनिक रंगकर्मीयों में उस उच्च प्रोफेशनलिज्म कि कमी ही आधुनिक हिन्दी रंगमंच के पतन के लिये जिम्मेवार है ,हालांकि यह ,प्रोफेशनलिज्म ,आधुनिक हिन्दी शौकिया रंगमंच के जनक कहे जाने वाले रमेश मेहता ,आर .जी .आनंद ,शीला भाटिया ,बेगम जैदी आदि में कूट -कूट कर भरा था |

नौटंकी और पारसी रंगमंच (वास्तव में ,कोई भी कला)व्यावसायिको कि ही कला होती है ,क्योकि एक -दो प्रदर्शनों इसमें अपेक्षित उत्कृष्टता नही आ सकती

|इसके लिये तो लगातार परिश्रम कि आवश्यकता होती है |नौटंकी किसी एक लगे -बंधे तरीके से शुरू हुई और वैसे ही चलती रही ,ऐसा नहीं था -नौटंकी ने पारसी के प्रभाव को भी लिया ,सैट दृश्य ,परिकल्पना और अन्य तकनीकी प्रयोग भी किए |नौटंकी कि जान बहरे -तवील शुरू में नौटंकी में प्रयोग नही होती थी ,यह तो बीसवी के प्रारम्भ में नौटंकी का हिस्सा बनी |

चीन का विश्व -प्रसिद्ध पीकिंग औपेरा देखकर यह अनुभव हुआ कि यदि नौटंकी को भी इसी तरह राजकीय प्रश्रय व गवई बिदेसिया शैली कि तरह किसी सतीश आनंद सरीखे लगन वाले आधुनिक रंगकर्मी के सतत प्रयासों का सहारा मिला होता ,तो नौटंकी के रूप में पश्चिमी औपेराओ का एक उत्क्रिस्ट जवाब हमारे पास भी मौजूद होता |जैसा कि राजेंद्र रघुवंशी ने लिखा था ,"मराठी का तमाशा ,बंगाल कि

जात्रा ,गुजरात के भवाई ,सभ्यजनो .से तिरस्कृत ही रहे है | उन्हें अश्लील और निम्न स्तर का ,सामान्य मनोरंजन का साधन माना जाता था |लेकिन वे अब परिस्कृत रूप में प्रबुद्जनों के भी आकर्षण के केंद्र है और राजकीय संरक्ष्ण पाकर उनका भरपूर विकास हुआ है |यदि नौटंकी को भी ,सभ्यजनो ,ने प्रश्रय न दिया ,तो यह भी विकृत होती चली जायगी और ताज्जुब नही कि इसका नाम ही खत्म हो जाए | तमाशा और जात्रा का उत्थान हो जाने से आज मराठी और बांगला भाषा के बड़े -बड़े सिने और नाट्य -अभिनेता इनमे अभिनय करना गौरव कि बात समझते है अभी हाल ही में सीमा बिस्वास जैसी बड़ी कलाकार ने एक साल तक असम में एक, जात्रा -कम्पनी ,में काम करके अपनी अभिनय -कला को परिस्कृत व परिमार्जित किया था -अ .गोयल)|हमारे पढ़े -लिखे लोग नौटंकी के नाम से ही नाक -भौ सिकोड़ते है |...नौटंकी के परिष्कार में संगीतकार श्री अनिल बिस्वास और नाट्यकलाविद श्रीमती शांता गांधी काफी काम कर चुकी है "

हबीब तनवीर ,सर्वेश्वरदयाल सक्सेना इब्राहिम अलकाजी ,मुद्राराक्षस ,सतीश आनंद उर्मिल कुमार थपलियाल ,डा .शरद नागर जैसे अनेको आधुनिक रंगकर्मियों ने अपने -अपने कार्य -क्षेत्रों में इस विधा में हाथ आजमाया है |परन्तु जनता - जनार्धन कि लाडली होने पर भी ,नौटंकी के गर्दिश के दिन न जाने क्यों कभी खत्म होने में ही नही आते |अब तो इस कला के अंतिम बड़े कलाकारों में एक गिर्राज प्रसाद भी हमारे बीच नही रहे ,तब रानावि क्या नौटंकी कलाकारों पर एक - दो पुस्तके छाप कर ही चुप बैठ जाएगा ,या फिर अलकाजी कि तरह नौटंकी के नये प्रयोग करके इसे पुनर्जीवित करने कि चेष्टा में हाथ बटाएगा ,और भारतवर्ष कि लोक व शास्त्रीय के बीच आदान -प्रदान कि परम्परा को जारी रखेगा |

भारतीय_राष्ट्रीय रंगकर्म कि एक झाकी

रंगमंच कि विशेषता है कि नाटक मंच पर जन्म लेता है मंच पर ही समाप्त हो जाता है उसके अनुभव के साक्षी होते है अभिनेता और दर्शक ;जहा दर्शक अभिनय का आनंद लेते हुए समाज को नाटक के दर्पण में मंच पर देखते है ,अपने आपको और समाज में अपनी भूमिका को समझने का प्रयास करते है ,वही अभिनेता ,अभिनय के माध्यम से सामाजिक मूल्यों ,मान्यताओ -आस्थाओं कि जाच -पड़ताल करते है |एक ओर जहा वे पात्र का अभिनय कर आनन्दित होते है तो दूसरी ओर सामने बैठे दर्शको कि जीवंत प्रतिक्रिया से अपनी प्रस्तुति का मूल्यांकन भी करते है |अभिनेता -दर्शक के बीच कि यह क्रिया -प्रतिक्रिया नाटक के समाप्त होने के साथ ही पूर्णता को प्राप्त होती है |मंच कि रौशनी बुझते ही और हॉल का प्रकाश जलते ही दर्शक और अभिनेता के बीच मानसिक ,भावनात्मक और आध्यात्मिक अनुभव के आदान -प्रदान कि क्रिया समाप्त हो जाती है |नाट्यकला इस मामले में अद्भुद है कि बाद में इसका कोई प्रमाण नहीं बचता और न ही एक नाट्य प्रस्तुति के अनुभव को दोहराया जा सकता है |सम्भवता

;नाट्य कला कि इस विशेषता का प्रभाव रंगकर्मियों के अचेतन मन पर भी पड़ता है इसलिए शायद अधिकांश रंगकर्मी अपने रंगकर्म का ठीक से कोई प्रामाणिक रिकॉड भी नही रखते |बल्कि ज्यातर यही मानते है कि ये उनका काम नही है ,इतिहासकारो या शोधकर्ताओ का काम है |यह तक कि इब्राहिम अल्काजी जैसे प्रतिष्ठित निर्देशक का भी कहना है "मै अपने काम का रिकॉड रखना पसंद नही करता जो काम किया वह अतीत हो चूका |मेरा ध्यान आगे के नए नाटक पर रहता है "

नाटक महात्मा वर्सेस गांधी में महात्मा गाँधी जैसे समकालीन ऐतिहासिक मिथक सा बन चुके चरित्र को बड़ी मेहनत ,कुशलता और सफलता से निभाया ,नसीर एवं स्वीकार करते है कि "इस ऐतिहासिक किरदार का चरित्रांकन करने और उसे अपने व्यक्तित्व में उतारने के लिए मुझे काफी तैयारी करनी पड़ी |मैंने बापू कि तस्वीरे देखी और लोगो कि स्मृति में मेल खाने लायक चित्राकंन किया |मुझे बापू कि आवाज में पिच से मेल के लिये अपनी आवाज का पिच बढ़ाना पड़ा ,पुरे किरदार को सादगी में ढालने का अभ्यास करना पड़ा |रिहर्सल के दौरान अपने ख्यालो में मै गांधी के विचारों को याद करता रहता था |स्क्रिप्ट पढकर बापू कि चाल -ढाल का काफी अभ्यास किया |"यू तो नसीर अपने प्रत्तेक चरित्र को समग्रता से ग्रह्ण कर उसकी छोटी -से -छोटी डिटेल को भी आत्मसात करने का प्रयास हमेशा ही करते है परन्तु गांधी के चरित्र को साकार करने में उन्होंने सचमुच कड़ी मेहनत कि ....|

भारतीय रंगमंच के इतिहास कि मुश्किलें :

हिन्दी रंगमंच और नाटक पर पूरी सदी में हुए प्रयोगों के विशलेषण के साथ उनका बड़े केनवस पर लेखाजोखा प्रस्तुत करते हुए समस्याओ और सम्भावनाओ का

तेजस्वी विमर्श है |बीस अध्यायों में हिन्दी नाटक तथा रंगमंच के समग्र अधतन परिदृश्य कि अच्छी छानबीन और मीमांसा इसमें प्रस्तुत कि गई है |गिरीश जी ने इस परिदृश्य कि धूमिल सम्भावनाओ और चमकदार प्रसंगो को भी समझा है और अँधेरे कोनो को भी बीसवी शती को वे नाटक और रंगमंच के लिये क्रांतिकारी समय मानती है ,जो सर्वथा उचित है | वस्तुतः हर कला के क्षेत्र में जितनी संभावनाए इस शताब्दी ने उजागर कि ,वैसी कभी किसी समय में नही हुई थी |हिन्दी क्षेत्र में लोकनाट्य ,पारसी रंगमंच ,पश्चमी रंगमंच ,असंगत नाटक ,यथार्थवादी नाटक ,नुक्कड़ नाटक ,संस्कृत नाटक और नाट्यशास्त्र कि नई समझ ,कविता मंचन ,कहानी के रंगमंच ,बाल रंगमंच ; इन सबके अभूतपूर्व उत्थान ने नाटककारो ,रंगकर्मियों और दर्शको के लिये जो चुनौतिया और संभावनाए प्रकट कि थी -उनसे रचनात्मक स्तर पर मुठभेड़ करने में हम कितने सफल और कहा विफल हुए -इसका लेखा जोखा भी यह पुस्तक प्रस्तुत करती है |आला अफसर ,बकरी ,अबू हसन आदि नाटको कि प्रस्तुतियों में नौटंकी कि शैली के द्वारा जो सार्थक प्रयोग हुए उनके साथ भारतेंदु कि चन्द्रावली में रासलीला के मंच के संस्कारों को गिरीश जी ने ठीक -ठीक पहचाना है |उन्होंने 'पारसी रंगमंच और हिन्दी रंगमंच 'के अंत :सम्बंधो कि पड़ताल और हिन्दी रंगमंच पर पारसी थियेटर कि शक्तिमत्ता कि सही-सही पहचान न कर पाने कि विफलता को भी ठीक से रेखांकित किया है |भारतेंदु पर विचार करते हुए गिरीश ने अंधेरनगरी में पारसी रंगमंच के साथ अन्य अनेक शैलियों से लोकनाट्य के तत्वों का अद्भुत समागम पाया है |अलग -अलग निर्देशकों ने अंधेरनगरी कि कितने कोड़ो से कितनी विचार दृष्टि या दृष्टि बिन्दुओ के साथ कितनी ही शैलियों में प्रस्तुतिया कि है ,और उनसे हर बार किस तरह अंधेरनगरी कि अर्थवत्ता कि शक्तिमत्ता प्रामारिक हुई है -यह गिरीश जी के अध्धयन से जाना जा सकताहै |चन्द्रगुप्त और स्कन्दगुप्त के सन्दर्भ में प्रसाद के साहित्य में व्यक्ति कि स्वाधीन चेतना और विश्वदृष्टि का समन्वित सौन्द्र्यपुंज

गिरीश जी ने देखा है |'बीसवी शताब्दी का हिन्दी नाटक और रंगमंच सर्वेक्षण और विवरण भी दिया गया है और कुछ उपेक्षित प्राय नाटककारो का पुन्मुल्यान्कं अवश्य गिरीश जी ने इसमे किया है |भारती के अंधायुग कि अल्काजी ,एम् .के .रैना ,सत्यदेव दुबे ,बंसी कौल ,रतन थियम आदि निर्देशकों के द्वारा कि गई प्रस्तुतियों के उल्लेख के साथ अंधायुग कि रंग सृष्टी और नाट्यसृष्टी पर विचार गिरीश जी ने किया है विशेष रूप से एशियाई सन्दर्भ में हमारी रंगयात्रा में आए नए पड़ावो को भारती के इस नाटक के विवेचन में यहां खोला गया |है वैश्विकरण का दौर आरम्भ हो चुका था ,

बेगम का तकिया ,मुख्यमंत्री ,कभी न छोड़े खेत ,कुरु कुरु स्वाहा ,रागदरबारी ,बाण भट्ट कि आत्म कथा या छिन्नमस्ता जैसी औपन्यासिक कृतियों के नाट्यप्रयोग ने हिन्दी रंगमंच पर सम्भावनाओं के ने द्वार खोले है |'गोदान 'जैसी एक कृति तीन अलग -अलग निर्देशकों के द्वार अलग -अलग नामो से प्रस्तुत होकर मंच पर क्या शक्ल लेती है |

अंधायुग ,अंधेरनगरी ,आधे अधूरे ,दिल्ली ऊचा सुनती है ,सिंहासन खाली है ,मृच्चाकटिक ,जाती ही पूछो साधु कि ,जुलुस ,आला अफसर आदि नाटको कि २० से अधिक है |

मैथिलि लोकरंग महोत्सव :संभावना का नया व्दार

अन्य भारतीय भाषा -भाषी रंगमंच के सन्दर्भ में मैथिलि रंगमंच पीछे है यह कहना अब उचित नही होगा |भारत कि राजधानी दिल्ली में सभी प्रमुख भारतीय भाषाओ का रंगमंच है |परन्तु पहले मैथिलि रंगमंच का अभाव था |विगत कुछ वर्षों से मैथिलि लोक रंग (मैलो रंग)ने अपनी जबर्दस्त उपस्थिति से दिल्ली के रंगमंच में सार्थक हस्तक्षेप किया है |रेखांकित करने वाली बात यह है कि मैलो रंग का

उद्देश्य केवल मैतिली नाटको कि प्रस्तुति नही बल्कि मैतिली रंगमंच का समग्र विकास है |इसलिय मैलोरंग समय -समय पर रंगमंच विषयक सेमीनार ,नियमित पत्रिका का प्रकाशन ,कार्यशाला ,कलाकारों कि नाट्यवृति के साथ -साथ नाटको कि प्रस्तुति करते रहने के लिए कटिबद्ध है |

विगत १ सितम्बर से ३ सितम्बर तक दिल्ली में द्रितीय मैलोरंग महोत्सव पूरी भव्यता के साथ सम्पन्न हुआ |पहले दिन श्रीराम सेंटर सभागार में उद्घाटन में मुख्यमंत्री शीला दीक्षित कि उपस्थिति एवं आयोजन को देखकर उनकी प्रसन्नता उनके वक्तव्य में झलक रही थी |

स्त्रियों की उपलब्धी का उत्सव -पूर्वा

पिछले दशको में पुरुष वर्चस्व प्रधान अन्य क्षेत्रो में आए बदलाव कि तरह रंग निर्देशन के क्षेत्र में भी अनेक महिला निर्देशक उभरी है जिन्होंने अपनी एक अलग पहचान बनाई है |इनमे से कइयो का काम अनेक दृष्टियों से महत्वपूर्ण और पथ प्रदर्शक रहा है |स्त्रियों कि समाजिक स्थिति ,जीवन में निजी अनुभव और चीजो को देखने के भिन्न नजरिये के कारण सम्भवत :धीरे -धीरे नाट्य निर्देशन की मानय पद्धति में भी बदलाव आया है |यह आयोजन स्त्रियों को केंद्र में रखकर इस बदलती रंग भाषा ,पद्दति ,प्रक्रिया तथा उनके इस अपेक्षा कृत ने क्षेत्र में उभरते विविध मुद्दों ,सवालों ,समस्याओं आदि का जायजा लेने की गरज से लिया गया था |

हमारा समय और रंगमंच

जब हम कलाओं ,साहित्य और रंगमंच कि बात करते है तो हम हिन्दी कि बात भी करते है |उस हिन्दी कि बात करते है जो बहुत शीघ्र इतिहास की वस्तु होने जा रही है |हिन्दी कि हत्या के हम सब साक्षी है |

आज राज्य संस्कृति के मामले में जितना निष्ठुर है उतना शायद ही कभी रहा हो |आज का उन्मादी समाज कलाओं का जैसा दुश्मन है वैसा शायद ही कभी रहा हो |ऐसे में उद्देश्यपूर्ण ,सोद्देश्य ,सार्थक ,प्रतिबद्ध ,कलात्मक ,विचारशील ,विचारोत्तेजक इत्यादि किस्म के नाटक करना असम्भव हो गया है |परसाई जी ने लिखा है कि कबीर अपने समय में काफी बड़े अखाड़े के खलीफा रहे होंगे वरना हिन्दू -मुसलमान दोनों से दुश्मनी कर रचनाकर्म करना सम्भव नही होता |आज के समय में कबीर का कही पुतलादहन होता रहता या फिर वो किसी दुसरे देश में बैठकर राष्ट्र को संदेश दे रहे होते |

नाटक को हथियार बनाने वाले कुछ कारीगर है तो पर संख्या बहुत सीमित है |विजय तेंदुलकर जैसा निर्भय और समझौताविहीन नाटककार बहुत दुर्लभ है| नए नाटक कम आ रहे है और बहुत कम हो पा रहे है |हमारी आज कि सच्चाई को अभिव्यक्ति दे ऐसे नाटक चाहिए ,जो नही है |आज का समय नाटको में अपनी उपस्थिति मांग रहा है |कुछ कहानि रूपान्तर कुछ एक्का -दुक्का नाटक ही आए है जो हमारे समय को प्रतिबिंबित करते है |वरना चहु ओर आज भी अंधा युग और आधे -अधूरे ही चले जा रहे है |आज “शानत्ता कोर्ट चालु आहे “करके किसे सृजन का सुख मिल सकता है |मिलता है तो इसका मायने यही है कि निर्देशक कुछ नया करने का खतरा मोल लेने को तैयार नही है |

नाटक दुर्लभ और महंगा होता जा रहा है |नाटक में भी बाहर कि उपस्थिति दिखाई दे रही है जबकि खरीददार नही है |मगर बेचने वाला कह रहा है कि माल बीके नही कोई बात नही पर सस्ता नही किया जाएगा |ये एक अलग किस्म का बाजारवाद है |मगर है |जिस नाटक को आप युगांतकारी कहते है ,जिस नाटक को आप श्रेष्ठ कहते है ,उसका शो नही होता |क्योकि नाटक के मंच का खर्च लाखो में पहुच चुका है |आयोजन करने वाला दे नही सकता |सरकारी संस्थान भी नही दे सकते |ऐसे श्रेष्ठ नाटक का क्या मायने है |ये तो केवल इतिहास में दर्ज किएजाने के लिए ही तैयार हुए |इसमें काम करने वाले कैसे कलाकार है जिन्हें इसका शो करने कि कोई ललक नही आश्चर्य है |हर तरह के नाटक होते है |होते रहते है |अच्छे और बुरे |मगर यदि नाटक करने के पीछे समाज को कुछ देने की इच्छा हो तो फिर नाटक को अभिजात्य से जन कि ओर तो जाना ही होगा |

व्यावसायिक रंगमंच पर पुनर्विचार कि जरूरत

नाटक एक संशिलष्ट कला है ,उसके इस संशिलष्ट कला -रूप में साहित्य अर्थात् नाट्यकृति केंद्र में है |हिन्दी नाटक और हिन्दी रंगमंच दोनों कि दृष्टि से यह बहुत अच्छी स्थिति नही है कि हम 'नाटक'और 'नाटककार'के महत्त्व या 'केन्द्रीयता' पर बात कर रहे है |संशिलष्ट कला -माध्यम होने के कारण जितनी चुनौतिया नाटककार कि है ,उतनी ही रंगकर्मी कि भी |यह बहुत दुखद स्थिति है कि नाटक न पढ़े जाते है ,न किए जाते है ,न देखे जाते है और न साहित्यक समीक्षा के केंद्र में आतें है |

नाटककार और निर्देशक ,रंगमंच की विसंगति और विडम्बना ,दर्शक की उपेक्षा ,सामाजिकता के सवाल ,भारंगम का पिछले सभी वर्षो का संतुलित इतिहास ,वैशिष्ट्य और मूल्यांकन ,नाटककार और समीक्षकों के व्यक्तित्व ,साथ ही प्रमुख

हिन्दी नाटको कि प्रस्तुतियों के निर्देशकों और छायाचित्रों से नाटककार केन्द्रित अंक कि पूर्ण छवि उभरती है |

नाटककार और निर्देशक के बीच की दूरियाँ ,संवाद हीनता ,असामंजस ,नाट्यकृति के भीतर अवांछित तोड़मरोड़ ,अंह (ईगो)और टकराहट के सवाल नये नही है और न पहली बार उठाए गए है |बीस -पचीस वर्षो से लगातार इस पर लिखा भी जाता रहा है और महसूस भी किया जाता रहा है |नाटककार के नाम का ही उल्लेख न करना ही बहुत बड़ा अपराध है कुछ घटनाएँ भी होती रही है |बड़ी -बड़ी संस्थाओं के आयोजनो ,उत्सवों ,सेमिनारो में सब होते थे ,नाटककार ,साहित्यकार ,समीक्षक नही होते थे |बाद में धीरे -धीरे समझ में आया कि ऐसा क्यों है ?यह बहुत ही गलत और रंगकर्म की सजीव ,सजग सहभागिता की परम्परा के विरुद्ध था और यह तो एक मजाक है , अपमानजनक स्थिति यह है कि नाटककार के नाम का उल्लेख ही न हो |हमने 'रूपान्तर नाट्यमंच'' के ३५ वर्ष के इतिहास एवं कर्म में ,लेखन में नाटककार को हमेशा केंद्र में रखा |नाटककार ,निर्देशक ,समीक्षक सबसे परीसंवाद हुआ |उनके और दर्शक के समीकरण की बातें भी अनेक बार उठी |नाटककार कोई विवश ,लाचार प्राणी नही है |नाटक बेहद जटिल विधा है और मै मानता हू कि नाटक लिखना सबके बस कि बात नही है |कम निर्देशक लेखक होते है |जो निर्देशक लेखकीय प्रतिभा से युक्त है -वह है ,जैसे हबीब तनवीर |पर हर निर्देशक लेखकीय प्रतिभा से सम्पन्न होगा ,यह भ्रामक है |कोई नाटक लिखना सिखा सकता है -ऐसा मुझे नही लगता |लेकिन नाट्यपाठ ,चर्चा ,बहस (डिस्कशन),परिवर्तन ,पूर्वाभ्यास (रिहर्सल)और प्रदर्शनों के दौरान नाटककार ,निर्देशक ,अभिनेताओं का संवाद ,सहभागिता और उन्मुक्तता अनिवार्य है और उससे निश्चित रूप से अन्तेर पड़ता है |हमारे सामने लहरों के राजहंस का प्रत्यक्ष प्रमाण है |अभंगगाथा (नरेंद्र मोहन)या कृष्ण बलदेव वैद के नाटको के साथ निरंतर यह

क्रम चल रहा है असहमति ,मतभेद ,परिवर्तन दोनों को स्वीकारना होगा _नाटककार को भी ,निर्देशक को भी |रंगकर्म में भी तकनीक (टेक्नोलॉजी)का समावेश हुआ है लेकिन जीवनानुभव की प्रतिशतता उस अनुपात में नही बढ़ी |उसका नतीजा यह हुआ कि नाटक भी कुलीनता के घेरे में घिरकर रह गया |आमफहम की कम गुंजाइश रह गयी |जीवनानुभव की गहनता और व्याधि आज की सबसे बड़ी जरूरत है |जो अच्छे नाटक ,मौलिक हिन्दी नाटक ,हिन्दी नाटक -लेखन के इतिहास को बहुत आगे ले जाने वाले सिद्ध हुए थे |सातवे -आठवे दशक में ,मसलन प्रजा ही रहने दो ,हानूश ,माधवी आदि ,वे कितने ,कहा रिपीट हुए ?ज्यादातर बंसी कौल ,एम् .के .रैना तक सीमित रह गए |देश भर में प्रस्तुति -श्रृंखला से जो माहौल बनता है -नाटककार ,निर्देशक ,समीक्षक ,दर्शक के बीच जो दृष्टि बनती है ,वह क्यों घटती गयी ?ऐसा नही है कि ये प्रश्न आये नही है -बार -बार आये है पर हमने इनका सामना नही किया | तकनीक (टेक्नोलॉजी),भव्यता लाखो की प्रस्तुतियों में मायावी झाकियों ,ग्लेमर की बात सबने कही है |

यह मेरे लिए सचमुच एक खबर है और नई खबर है कि ,लोकप्रिय ,नाटक खेले नही जाते |अगर ऐसा है तो यह आश्चर्यजनक ,गम्भीर और विचित्र स्थिति है |सचमुच पारसी नाटक भीड़ बटोर सकते है -शैलीबध नाटको से ,संरचना (कम्पोजीशन)से लोग ऊब चुके है |उन्हें क्यों नही लगातार करके दर्शक ,बटोरे जाते “पुराने लोकप्रिय नाटक भी नही रिपीट होते ‘-यह कौन -सा जोड़ -तोड़ है ?यह तो बहुत सुखद है दर्शक बनाने के लिए |हमारा दायित्व नाटक को सरकारीकरण से मुक्त करके आत्मनिर्भर ,लोकप्रिय बनाना हो तो दर्शक भी उमड़ेगे और लेखक भी |आज इस पर विचार करना अनिवार्य है कि हमारी मान्यताए क्या है ?क्या हम ऐसा कोई दूरगामी लक्ष्य लेकर चल रहे है ?प्रशिक्षण के साथ अध्यापन ,शिक्षण ,इतिहास ,अध्ययन का महत्व भी प्रतिष्ठित होना चाहिए |प्राय: जयशंकर प्रसाद के

नाटको के प्रति अज्ञानता ,अवमानना का भाव ,हिन्दी भाषा और उसमे अंतनिर्हित काव्य की लय की अनुभवहीनता ,उचारण का भ्रष्ट रूप और संवादों की जल्दी - जल्दी अदायगी देखी जाती है |देश भर में ऐसे व्यक्तित्व है जो प्रसाद के नाटको के अध्यापन ,आलोचना ,मंचन में कार्यरत है -ऐसे विशेषज्ञों से भी सम्पर्क ,प्रशिक्षण कराना चाहिए |प्रसाद के नाटको को एक बार करके बंद करने की नही ,प्रयोगधर्मिता और भाषा -अधिकार की अपेक्षा है |

भारत रंग महोत्सव की परिकल्पना अपने आप में बहुत महत्वपूर्ण है |मौलिक नाटको को ,हिन्दी के नये -पुराने श्रेष्ठ नाटको ,नाटककारो और निर्देशकों के रंगकर्म को बड़े फलक पर लाने का वह बड़ा माध्यम है इसे जितना ही वैविध्यपूर्ण ,सशक्त बनाया जाए और परिसंवाद का ,सम्मिलन का विचार -विमर्श का आधार बनाया जाए ,उतने ही अच्छे परिणाम होंगे |भारतीय भाषाओं ,क्षेत्रीय बोलियों और पूरे हिन्दी प्रदेश में फैले रंगकर्म को ,विदेश की प्रस्तुतियों को एक साथ मंच और संवाद देना दर्शको को खीचने का बहुत बड़ा आधार है |

प्रतिवर्ष होने वाला भारंगम सचमुच रंगान्दोलन और देश -भर की गतिविधियों ,अभिनेताओं .निर्देशकों ,नाटककारो ,समीक्षकों ,रंगकर्मियों को एक साथ लाने का बहुत प्रमुख सर्जनात्मक आधार के साथ -साथ एक 'कसौटी 'बन सकता है |

राष्ट्रीय नाट्य विधालय अपने देश का अकेला ,बहुत महत्वपूर्ण संस्थान है |एशिया के इतने महत्वपूर्ण ,प्रतिष्ठित संस्थान ने भारतीय रंगमंच और हिन्दी रंगमंच को बहुत विकासमान ,सम्भावनापूर्ण और सर्जनात्मक बनाया है |निर्देशक ,रंगकला .रंगभाषा ,अभिनेता ,सभी पक्षों कि विशेषज्ञता को उसने प्रतिष्ठित किया है लेकिन रंगान्वेष्ण के वैविध्य में निर्देशक ही केन्द्रीय व्यतित्व होता गया और क्रमशा: नाटककार छुटता गया |इस स्थति को बहुत वैचारिक ,संवेदनात्मक एवं सर्जनात्मक

,शाश्वत धरातल पर महसूस करना और उस पर संवाद करना हमारा दायित्व बनता है आज हमारे मूल प्रश्न नाटककार की सत्ता या निर्देशक और नाटककार के सह - अस्तित्व के उतने नही है ,जितने उनके सार्थक सम्बन्ध द्वारा नाटक और रंगमंच की जीवन -शक्ति को आज के सन्दर्भ में पुनसृजित करने से है |

अभिनय कई प्रकार के

महज चंद साधनों के सहारे ज़्यादा -से -ज़्यादा कह जाना -शायद इसी का नाम अभिनय की कला का निखार है |निहायत किफायत से बहुत - कुछ कह जाना ,यह शायद हर कला की तारीफ में कहा जा सकता है ,चाहे वह कविता हो ,चित्रकारी हो ,प्रस्तुति हो ,या अभिनय |इसका यह मतलब नही कि कूद -फांद और चीख -पुकार की थिएटर में गुंजाइश नही |कहना सिर्फ यह है कि फन का “फ्रेमवर्क,,महदूद और बहुत कसा हुआ होता है ,लेकिन फैलाव बजाहिर लामहदूद होता है |इन तमाम चीजो के बावजूद फनकार सख्त किफायत से कम लेता है ,महज इसलिए कि इसे अपने साधनों पर कुदरत (नियन्त्रण)होती है वह अपने वसीलो (साधनों)की कुव्वत -कुल से पूरी तरह वाकिफ होता है ,और जितने असलाह उसके पास होते है ,उनका मौका व महल के मुताबिक़ इस्तेमाल अच्छी तरह जानता है |इसलिए उस किफायत से काम लेता है ,जो अभिनय को ख्यालअंग्रेज बना देती है ,जिसे देखकर आदमी चौक उठता है |ये खूबियाँ हर बड़े अभिनेता में नजर आती है ,और छतीसगढ़ के बेहतरीन कलाकारों में भी ये खूबियाँ मौजूद है ,जिनके ज़ेरेअसर इस

इलाके की नई पीढ़ी के अभिनेता बढ़ती हुई संख्या में अपने ग्रामीण मंच पर काम करते नजर आ रहे है |

पिछले कुछ साल के अरसे में कुछ नए नाटककार और थिएटर के नए प्रयोग जो हमारे सामने आए है ,उनके कुछ अपने ऐसे तकाज़े है ,जिनका असर अभिनय की कला पर बराबर पड़ रहा है मोहन राकेश ,विजय तेंदुलकर ,गिरीश कार्नाड और बादल सरकार तो ऐसे लेखको में है जिनके मुख्तलिफ शैलियों के नाटको के आधार पर अभिनेता की ट्रेनिंग का पूरा एक प्रोग्राम खड़ा किया जा सकता है |

नाटक के कुछ वर्जित प्रदेश

संयोग से इधर हिन्दी में दो ऐसे नाटको की रचना हुई है जिनके विषय नाट्य -लेखन में अछूते रहे है |पहला नाटक है मचिन्द्र मोरे का (जानेमन),जिसे महाराष्ट्र के चर्चित नाट्य निर्देशक वामन केंद्रे ने राष्ट्रिय नाट्य विध्यालय रंगमंडल के साथ अक्तूबर २००२ में मंचित किया था इसके लगभग एक वर्ष बाद पुन:उसी रंगमंडल के साथ हिन्दी रंगमंच ,दूरदर्शन और फिल्मो के अभिनेता -निर्देशक राजेन्द्र गुप्त ने नन्द किशोर आचार्य के नए नाटक ,जिल्ले सुब्हानी ,को प्रस्तुत किया |दोनों नाटक समाज के उस वर्ग से अपने पात्र और कथा सामग्री का चुनाव करते है जिन्हें आम बोलचाल में हिंजड़े और सभ्य शब्दावली में किन्नर कहने का रिवाज है |शायद पहली बार एक नाटककार ने लगातार उनसे मिलकर ,उनके साथ रहकर ,उनकी जिंदगी की अंदरूनी तस्वीर

,जानेमन ,के माध्यम से दर्शको के सामने साकार की |इसके समांतर नन्द किशोर आचार्य का नाटक 'जिल्ले सुब्हानी ,का नायक हिंजड़ा जरुर है लेकिन ये नाटक उनकी जिंदगी के बारे में नही है |नाटक अपने कथ्य और तथ्य में पूरी तरह से ऐतिहासिक है ,जब मध्यकाल में खिलजी वंश के आसपास दिल्ली के सिंहासन पर एक हिंजड़े ने शासन किया था |उस शासक और उसके सहायक मंत्री के साथ समलैगिक सम्बंधो की दुनिया में ले जाता है यह नाटक |देखा जाए तो एक तरह से दोनों ही पुरुष की नपुंसकता से सम्बद्ध है |

ऐसा नही है कि इस प्रकार के विषय पर किसी हिन्दी नाटककार ने पहली बार लिखा हो |आज से लगभग 70 -75 वर्ष पूर्व जयशंकर प्रसाद ने ध्रुवस्वामिनी ,नाटक की रचना की थी |पत्नी व्दारा एक नपुंसक पति को अस्वीकार किए जाने की दृष्टि से यह एक बहुत ही बोल्ड कथ्य वाला नाटक था जो आज भी उतना ही समकालीन है |इसी से मिलता - जुलता दुसरा नाटक भी है सुरेन्द्र वर्मा का 'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक ,जिसमे नायिका अपने नपुंसक पति का परित्याग कर अपने प्रेमी के साथ चली जाती है |

नाटक की दुनिया में इस तरह के असहज ,अप्राकृतिक और लगभग तिरस्कृत कथ्य भले ही कम चुने गए हो लेकिन हमारे पौराणिक आख्यानो ,लोक -कथाओं ,महाकाव्यों ,इतिहास और साहित्य में वे

दोहराए जाते रहें है |स्वयं ब्रम्हा द्वारा अपनी पुत्री सरस्वती से सहवास का प्रसंग ,चन्द्रमा द्वारा गुरु पत्नी के साथ लगभग ऐसा ही समागम ,

पुरन भगत का सौतेली माँ के साथ दैहिक सम्बन्ध अथवा ऋग्वेद का यम -यमी संवाद (जहा यमी अपने भाई यम को अपने साथ शारीरिक सम्बन्ध के लिए आमन्त्रित करती है)|फिर क्या कारण है कि नाट्य रचना के क्षेत्र में इस दृष्टि से बहुत कम पहल हुई है ?कहने को सोफोक्लीज का 'इडिपस,और रासीन का 'फैद्रा ,ऐसी ही वर्जनाओं के दायरे में घूमते है फिर भी तीन हजार साल के लिखित इतिहास को ध्यान में रखा जाए तो ऐसे नाटक बहुत कम मिलेंगे |हां यदि नाम ही गिनाने हो तो भारतीय नाट्य साहित्य में 'वासना कांड ,अंजू मलिल्गे ,सखाराम बाइंडर ,कमला ,कर्फ्यू,जैसे नाटको के नाम लिए जा सकते है |

रंगमंच का समाजशास्त्र

हम सभी जानते है कि हर कला ,विधा और माध्यम का समाज से गहरा

रिश्ता होता है |वह इस अर्थ में कि इनमे से हर विकल्प को अपनी स्रोत सामग्री समाज के भीतर से ही प्राप्त होती है |यदि हम कलाओं के स्थूल रूप से तीन -चार वर्ग कर ले तो हर कला समाज के साथ किस रूप में अपना वह गहरा रिश्ता बनाती है इसे देख पाना बहुत सहज हो जाएगा |उदाहरण के लिए ,ललित कलाए जिनमे चित्रकला ,मूर्तिकला ,स्थापत्य और दूसरी शिल्प कलाओ को रखा जा सकता है |प्रदर्शनकारी कलाए जिनमे नृत्य ,नाटक ,गीत ,संगीत के साथ -साथ फिल्म और दूरदर्शन को भी शामिल किया जा सकता है |शाहिटी जिनमे सभी विधाए जैसे कि

कहानी ,कविता ,उपन्यास ,रिपोत्ताज ,यात्रा, वृत्तांत ,डायरी लेखन ,संस्मरण ,आत्मकथा सम्मलित है |

'कोर्ट मार्शल ,जिस लाहौर नही देख्या ....,जैसे नाटको को रंगमंच पर मिली सफलता क्या सूचित करती है ?दूसरी तरफ शाश्वत और सार्वकालिक विषयों पर लिखे गए नाटको का भी दर्शको से वैसा ही अटूट रिश्ता रहा है जैसे कि राजा इडिपस ,अँधेर ,नगरी चौपट राजा ,ध्रुवस्वामिनी इत्यादि |इसका सबसे बड़ा कारण यही है कि नाटक चाहे किसी भी युग में लिखा गया हो और किसी भी समय विशेष की कथा का बयान करता हो वह घटित हमेशा वर्तमान में होता है अर्थात उसे देखने वाले दर्शक उस काल और समय के ही तात्कालिक और समकालीन समाज से जुड़े होते है जिस समय विशेष में वह नाटक उनके समक्ष मंचित हो रहा होता है |अत :स्वाभाविक है कि वे दर्शक नाटक की कहानी और उसमे निहित विचार को एकदम से अपने समय से जोडकर रखने लगते है |इस तरह जो नाटक जितना ज़्यादा समकालीन होगा वह उतना ही शाश्वत और सार्वजनिक होगा |नाट्य साहित्य में ऐसे बहुत से नाटको के उदाहरण प्रस्तुत किए जा सकते है जिन्होंने अपने मंचन के अवसर पर हर बार अपनी सामाजिक प्रासंगिकता को स्वंय प्रमाणित किया है |यदि हम दूसरी भाषाओं में न जाकर सिर्फ हिन्दी नाटक और रंगमंच से ही चुनाव करना चाहे तो बहुत से नाटको के नाम हमारे जेहन में आते चले जाएगे |इसी क्रम में शंकर शेष का पोस्टर ,सर्वेश्वरदयाल सक्सेना के बकरी और गरीबी हटाओ का भी उल्लेख किया जा सकता है |इतना ही नही ,धर्मवीर भारती का अंधायुग ,जगदीश माथुर का कोणाक ,मोहन राकेश ,भीष्म साहनी ,सुरेन्द्र वर्मा के सभी नाटक समाज से अलग कोई समस्या उठाते है ?या कि किस नाटककार का कोई भी नाटक समाज से अलग अपने किसी काल्पनिक संसार में स्थित है ?अत :यह स्वम् सिद्ध है कि रंगकर्मी अपने माध्यम में रहकर भी सबसे

ज़्यादा समाज की समस्याओं पर उंगली रख सकता है उनके समाधान दे सकता है और जटिल -से जटिल परिस्थितियों में भी कोई -न -कोई विकल्प या रास्ता सुझा सकता है |

दिल्ली नाटक का परिदृश्य

सम्पूर्ण भारतीय रंगमंच और विशेष कर दिल्ली रंगमंच के परिदृश्य एक नजर डाले तो कुछ चीजे बहुत स्पष्ट होकर सामने आता है इन चीजो के दो पक्ष है एक पक्ष व्यहारिक है और दूसरा पक्ष रचनात्मक व्याहारिक पक्ष में प्रायः ऐसा चर्चाए सुनाने को मिलती है कि रंगमंच में अच्छे नाटक नहीं लिखे जा रहे है नाटको के दर्शक कम होते ज रहे है और नाटक करनेवाली मंडलियो के लिये आर्थिक संसाधनों का

निन्तान आभाव होता जा रहा है |लेकिन वास्तविक ठीक इसके विपरीत है , यदि मात्र हिन्दी रंगमंच से ही कुछ नाटको का नाम लिया जाय जो लिखे गए और मंचित किये गए और बेहद चर्चित हुए ,वे है कृष्ण बलदेव का भूख आग है महेंद्र भल्ला के दिमाके हस्ती दिल कि बस्ती कहा है कहा नन्द किशोर का जिल्ले सुब्हानी येतो हुए अनुभवी रचनाकारों के ताजा नाटक और इनके साथ साथ युवा नाटककारो व्दारा लिखे और मंचित हुए गहरे और मार्मिक नाटको का आभाव नहीं था उदाहरण के लिये अनुपम कुमार का मृगतृष्णा शहीद अनवर का हमारे समय में आसिफ अली का काफ्का और मीरा कान्त का नेपथ्य राग | अब तक सीधे सीधे इस परिदृश्य रचनात्मक बात कर सकते है दिल्ली रंगमंच का काम इस दौर में चारो दिशाओ में बढता दिखाई पड़ता है इस दिशा वह है जिसमे रंग निर्देशक

शास्त्रीय और लोक नाट्य शैलिय के गीत ,संगीत ,मुद्राये और गति विधान ले कर एक नए शैली तैयार कि कोशिश कर रहे है | तीन चार दशक पहले ऐसा दौर आया था जब इन तत्वों आधुनिक अभिनेताओ के साथ हु बू हु उसी रूप में प्रस्तुत

करने के अनगिनत प्रयास हुए लेकिन उससे कोई ठोस परिणाम नजर नहीं आया |यदपि उस दौर में भी हबीब तनबीर शांता गाँधी जैसे निर्देशक का काम अलग दिखाई पड़ता है क्योकि उन्होंने शास्त्रीय अथवा लोक तत्वों को अपने तरीके से इस्तमाल किया | रंग परिदृश्य का दूसरा छोर इधर विकसित तमाम तकनिकी साधन संसाधनों को मंच पर ले आने कि दिशा में सक्रिय है | दूरदर्शन रेडिओ कंप्यूटर और ऐसे ही दुसरे तकनिकी तत्व हो सकते है वो सब मंच का हिस्सा बने है फिर चाहें उनकी जरुरत हो या न हो | नतीजा यह भी हुआ है कि कई बार प्रस्तुतियों में मात्र तकनिकी चकाचौक कि छटा दिखाई पड़ती है और अभिनेता या तो दिखाई नहीं पड़ता और दिखाई भी पड़ता है तो बौना सा यदि हम अनुराधा कपूर आनामिका और अभिलास पिल्लै के नाटक देखे तो बात साफ़ हो जाएगी |

एक कतार ऐसे रंगकर्मी कि भी थी जिन्होंने अपने आप को किसी शैली में नहीं बंधा और हर बार आलेख के हिसाब से प्रस्तुति का जो रूप बनकर सामने आया उसी दिशा में अपने आप को आगे बढाया कीर्ति जैन एक ऐसा ही नाम है जिन्होंने बेशक बहुत ज्यादा काम नहीं किया लेकिन हर बार किसी उपन्यास अथवा कहानी के समानान्तर पहले अपना एक स्वतन्त्र आलेख विकसित किया और फिर उसके भीतर से उसकी प्रस्तुति शैली | इस दृष्टि से भारत विभाजन त्रासदी पर उनकी प्रस्तुति और कितने टुकड़े , जिस लाहौर नहीं देख्या , एक महत्त्वपूर्ण प्रस्तुति है |

महिला निर्देशकों का नाटक

2004 में राष्ट्रिय नाट्य विधालय और नटरंग प्रतिष्ठान मिलकर पूर्वा नामक पन्द्रह दिवसीय महिला नाट्य निर्देशक समारोह आयोजन किया था | यह आयोजन इसलिए और भी ज्यादा महत्त्वपूर्ण हो गया था क्योकि इसमें देश विदेश कि नाट्य प्रस्तुतियों के साथ साथ वहा कि महिला रंगकर्मी ने भी भारी संख्या में शिरकत

कि थी | इस समारोह में चित्र मोहन ने एक बहुत ही रोचक नाट्य युक्ति का प्रयोग किया था जिसमे तीन पिता ,तीन पुत्र और दो माओ के माध्यम से कामतानाथ कि मूल कहानी को प्रस्तुत किया गया था | लेकिन कुछ ही क्षणों के बाद यह युक्ति अपनी साड़ी नाटकीयता खो बैठती है क्योकि आलेख को तीन तीन पत्रों में बबाटने मात्र से कोई गहरी बात साबित नहीं होती वरन प्रस्तुति और ज्यादा सतही और सपाट होती चली गयी | इतना ही नहीं,तीन पत्रों वाली युक्ति नारी पात्र के साथ क्यो नही अपनाई गयी इसका कोई कारण सनझ में नहीं आया | मंच पर सारा कार्य व्यापर एक सधी रेखा में चलता है और उसने प्रस्तुति कि सपाटता को और गहरे से रेखांकित कर दिया |बेशक दर्शको ने प्रस्तुति के कथ्य का भरपूरआनंद लिया लेकिन उसका कारण प्रस्तुति कि जीवन्तता न होकर रचनाकार का सशक्त आलेख है |दुबिधा निश्चय विजयदान देथा कि कहानी का एक अच्छा नाट्य रूपांतर था जिसमे गीत और संगीत को भी पिरोया गया था अभिनेताओ कि भी एक बड़ी भीड़ ने प्रस्तुति में कई तरह के रंग भरने कि कोशिश कि लेकिन प्रस्तुति अपने तकनिकी तामझाम में इस कदर उलझ गई कि उसका जो प्रभाव पड़ना चाहिये था वह नहीं पड़ा | बहरहाल इस नाट्य सामारोह के माध्यम से राष्ट्रिय रंगमंच नाइ और अनुभवी महिला निर्देशकों के काम को एक साथ देखकर भारत में महिला रंगमंच कि एक निश्चित तस्वीर उभरकर सामने आती है |

नाटको के गीत

थियेटर संगीत कि जितनी पुराणी परंपरा उससे कही अधिक उसमे वैविध्य है,विशेष रूप से प्रादेशिक शैलिय उसे बहुरंगी एवं समृध्द बनती है लोक नाट्य का तो वह अभिन्न अंग है |पारसी थिएटर ने व्यावसायिक धरातल पर इसका लाभ उठाया |

आगरा बाजार के नाट्य लेख का आधार नज़ीर अकबरवादी कि शायरी में से चुने गए है | साड़ी सामग्री को नाटकीय आकार देने और उपयुक्त स्थलों पर चुने गीतों के संयोजन का दायित्व भी हबीब ने सम्हाला |नज़ीर कि शायरी 19 सदी के जन जीवन के जिवंत परिदृश्य अनेक चित्र मौजूद है हबीब तनवीर कि चयन दृष्टी का पहला दृश्य आगरा के बाजार का है तिजारत में मन्दी और बेरोजगारी का आलम है | कई रोज से बिक्री न होने के कारण ककड़ीवाला ,लड्डूवाला ,बरफवाला तरबूजवाला जैसे सभी खोमचेवाला मायूस और चिडचिडे हो गए है | यह इसी का नतीजा है कि इनकी जिंदगी में मुफलिसी छाने लगी है, हालत इस प्रकार हो गयी है कपडे फाटे तमाम बड़े बाल बदन जमा मेल सब शक्ल कैदियों कि बनती है मुफलिसी दूसरा चित्र वह आत्म सम्मान का भाव तक भूल जाता है

मुफलिस कि कुछ नज़र नहीं रहती आन पर,देता है वह अपनी जान एक एक एक नान पर और इसका परिणाम होता है मुफलिसी को लड़ाती है मुफलिसी खोमचेवाले में ककड़ीवाला कुछ तेज और कुछ मुखर है| कही से ककड़ी वाला के मन में ये बात बैठ जाती है कि अगर कोई शायर ककड़ी कि खूबियों पर शायरी के कुछ बंद या नज्म लिख दे और वह उन्हें बाजार में गा गा कर ककड़ी बेचे तो उसकी बिक्री बड जाय | बाजार में क़ुतुबफरोश कि दुकान है कुछ शायर वह आते जाते रहते है वो हर एक से अपनी गुजारिश करता है ,सभी उसे हंसी में उड़ा देते है |

चरणदास सतनामी पंथ से सम्बन्ध रखता है |इस सम्प्रदाय में सत्य की प्रतिष्ठा पर बल दिया गया है ,इसकी मूल स्थापना है कि सत्य ही ईश्वर है और सत्य के मार्ग पर चलने से ईश्वर प्राप्त होता है |गुरु के ज्ञान से ही यह लक्ष्य सिद्ध हो सकता है |इस पंथ में गुरु महिमा का गुणगान किया गया है |चरणदास चोर के पहले गीत में इन्ही मान्यताओं का उल्लेख है |इस गीत का दोहरा महत्त्व है ,एक

ओर यह मंगलाचरण की परिपाटी का निर्वाह करता है ,दूसरी ओर यह गीत नाटक के उन बिन्दुओ को रेखांकित करता है कि जो नाटक की अन्तर्वस्तु और मुख्य पात्र के चरित्र के आधार है |

चरणदास चोरी का धंधा करता है |दुसरे गीत में चोर और हवलदार की लुका -छिपी पर टिप्पड़ी की गई है |इनकी तुलना चुहिया -बिल्ली की उचल -कूद से की गई है कोई भी व्यवस्था ,चाहे कितनी शिथिल या भ्रष्ट हो ,अगर सत्ता को सीधे चुनौती दी जाए ,वह कड़े कदम उठाएगी और सख्त सज़ा देगी |इसी तरह चुहिया बिल्ली के पंजे से बच नही सकती लोकरंग के लिखे इस गीत में एक सरल दृष्टांत द्वारा नाटक की रूपरेखा को व्यंजित किया गया है |

जिस लाहौर नई देखिया ओह जन्मिया नई को प्रस्तुत किया |असगर वजाहत द्वारा लिखित हिन्दी के इस उल्लेखनीय नाटक ने पर्याप्त ख्याति अर्जित कर ली थी | इस नाटक में साम्प्रदायिक सौहार्द के ज्वलंत सवाल को उठाया गया है यह समस्या जितनी भावोतेज्क है ,उतनी चुनौतीपूर्ण भी |हबीब ने इस समकालीन सवाल को यथेष्ट सुलझी दृष्टि से सम्हाला और कुछ परिवर्तन किए |उन्होंने यहाँ भी ब्रेश्ट की प्रदर्शन -पद्धति कि कुछ परिपाटियो को अपनाया है ,कोरस उनमे से एक है ,कोरस को अधिक प्रसांगिक एवं प्रभावोत्पादक स्वरूप देने के लिए नासिर काज़मी के अलावा इकबाल ,फिराक गोरखपुरी ,साहिर लुधियानवी ,अम्रता प्रीतम की नज्मो -गीतों को उपयुक्त स्थलों पर जोड़ा और नाटकीय अनुभव को असरदार बनाया |नाटक के अंत को भी बदला गया |समग्र प्रभाव की दृष्टि से प्रस्तुतिकरण सफल रहा और स्मरणीय भी |नाटक की विषयवस्तु और प्रस्तुति परिकल्पना यथार्थवादी है पर कोरस का सार्थक रहा |कोरस की शैली सम्बोधनपरक रही ,वह दर्शको को आश्वस्त रखने में सहायक सिद्ध हुआ है |कोरस को लेकर 'दुश्मन ,वाला संगति का सवाल यहाँ भी उठा |

स्पार्टाकस

किसी एसी नाट्य प्रस्तुति को याद करना जिसने आपके उपर गहरी छाप छोड़े हो आसन नही है उस छाप को समझने और उसकी व्याख्या का क्या अर्थ है? फिर यह भी प्रश्न है कि नाट्य प्रस्तुति को उस क्षण से अलग करके जिसमे वह संभव हुई थी देखने का मतलब है उसका अर्थ खो देना कोई भी नाट्य प्रस्तुति दीर्घजीवी नहि होती | उसका जीवन उस एक प्रस्तुति भर का ही नहिहता | हाल के नाम पर्दा उठने का इंतजार या मंच पर पहली हरकत कि प्रतीक्षा के दौरान दर्शक को यह पता नहीं होता अगला एक डेढ़ घंटे में उसे कौन सा अनुभव मिलने जा रहा है | नाटक का दर्शक बनाने के लिये नियमितता जरुरी है और सिर्फ नियमितता ही नहीं देखे नाटको में पर्याप्त विविधता भी होना चाहिये | नाट्येत्तर कारणों से नाटक देखने वालो कि कमी नहीं | राजनितिक या किसी अन्य कारण से किसी नाट्य दल विशेष तक उनका अनुभव सीमित है , उन्हें नाटकका दर्शक मानाने में कठिनाई है | कहने का अर्थ है येही कि दर्शक के रूप में आपके नाट्य अनुभव में पर्याप्त विस्तारौर विविधिता होनी चाहिये अभी भी ऐसे दर्शको कि कमी नहीं जो अपने शहर या गाँव से दूर किसी प्रस्तुति कि खबर सुन कर धक्के खाते हुए उसे देखने पहुचाते है और दो घंटे अँधेरे और उजाले में विभिन्न शारीरिक मुद्रोवो का जादू देख कृत्य कृत्य होकर लौटते है इसके साथ ही शायद यह कहना ही ठीक है कि नाटक का असली दर्शक वह है जो नाटक देखने के बाद ग्रीन रूम का रस्ता नही लेता बल्कि देखे हुए को धीरे धीरे अपने नाशो में प्रवाहित होते ख़ून में मिलाता हुआ अपने घर को लौटता है ऐसे भाग्यसालियों कि बात मै नहीं कर रहा है नाटक देखना ही जिनका पेशा बन जाता है वो तो उस दुर्लभ प्रजाति के सदस्य है जिनका नशा ही उनका पेशा है जिनका नसीब ऐसा नहि है वो नाटक देखते रहने कि अपनी सनक को जीवन की साधारणता में कैसे बचाए रखते है ?

हबीब तनवीर के आखिरी दिनों में तैयार किया उनका नाटक राज रक्त जिसमे रंगकर्म सौन्दर्यशास्त्रीय सिध्दांतका तीव्रता से बोध हुआ | शारीरिक मुद्राओ को निरलंकार करते हुए भी उन्हें नाटकीय बनाये रखना हबीब साहब के रंगमंच कि विशेषता है | राजरक्त ऐसा नाटक था यूनानी कल्पना से हमारा रंगमंच कितना अधिक ग्रस्त है और हबीब साहब कितनी सादगी से उसे चुनैती देते है |

स्पार्टाकस इसमें एक तरुन स्वप्न है ,यह कोमल संवेदनाओ के प्रस्फुटन का नाटक है | इसमें सबसे प्रभावशाली द्रश्यो में स्पार्टाकस और वारीनीय के बीच के प्रेम प्रसंग वाले दृश्य है और ग्लैडीयेताटरो के बीच दोस्ती के दृश्य | क्यों अन्याय के खिलाफ उठ खड़ा होना, सुन्दर भी है| ऊपर से भव्य और सभ्य दिखने वाली सभ्यता स्पार्टाकस गुलामो के भीतर दोस्ती के जिस जज्बे का जन्म दिखाया गया है वह हम सब कि कहानी भी है जो दोस्तिया तब बनी अभी तक जारी है |

मैन विदाउट शैडो इसका निर्देशन मुस्ताक काक नई किया और लगभग महत्त्वहीन तरह से इसका मंचन श्री राम सेंटर के आडोरीयम में किया गया था | प्रस्तुति के दौरान उपस्थित बहुत कम दर्शक या तो एक्टिंग कोर्स के अन्य या तो अभिनेता के रिश्तेदार या परिवारवाले | हिन्दी में ज्यो पाल सार्त्र के अधिक नाटक उपलब्ध नहीं है | इस नाटक का अनुबाद जे.एन . कौसल ने किया था | और इसे इसलिए अच्छा कहा जा सकता है कि नाटक के बौध्दिक तेज को उन्होंने हिन्दी कि बनावटी मुहारेबाजी से नष्ट नहीं होने दिया है , जो कि ज्यादातर पश्चिमी नाटको के हिन्दी अनुवादों में समस्या रही है | नात्क्के सार्त्र ने अपने अस्तित्ववाद संबंधो कि जिस कुशलता से पिरोया है वह तनाव ज एन कौशल के अनुबाद में भी दीखाई देता है दर्शन एक उबाऊ चीज है लेकिन कोई दार्शनिक विचार अगर कसे हुए कथानक में तनाव और उत्सुकता के ढांचे में पेश होता है तो आधिक ग्रहा होता है |सार्त्र का मानना है कि विचार वास्तविक जीवन के अनुभवो का परिणाम होते है

और उपन्यास या नाटक इन बुनियादी अनुभव को ज्यादा अच्छी तरह पेश कर सकते है | नाटक में दुसरे विश्वयुद के दौरान फ्रेंच रेजिस्टेंस मूवमेंट के पांच क्रांतिकारी एक स्त्री ,एक किशोर और तीन पुरुष एक कमरे में कैद है| एक असफल अपरेसन में पकडे जाने के बाड उन्हें लाया गया है | एक ओर ये सभी इस ग्लानी से जूझ रहे है कि उनके नाकाम आप्रेसन के वजह से खून खराबे में कई बेगुनाह नाग्रिकोकोअप्नी जान गवानी पड़ी ,दूसरी ओर सैनिक व्दारा किये जाने वाले टार्चर के लिये भी खुद को तैयार कर रहे है | उनका लीडर नाकाम अपरेसन के बाड किसी तरह बच निकला ओर अब उनसे लीडर का पता ठिकाना जानने के लोए बारी बारी पूछ ताछ कि जा रही है | सैनिक के टार्चर का मुकाबला किस तरह किया जाए ,कैदी इस पर चर्चा कर रहे है | क्या वो टार्चर के आगे टूट जायेंगे , क्या इसलिए सैनिक के आगे सरेंडर कर देना चाहिये| इस क्षण में लीडर के बारे में जानकारी गोपनीय रखना ही उनका काम है | एक कैदी खुद का टार्चर कि उस हद के लिये तैयार कर रहा है जब दीमक इकदम सुन्न हो कर चोट को भी नहीं महसूस नहीं कर पायेगा | लेकिन कम उम्र किशोर टार्चर के दौरान कि चीखो को ले कर दहशत में है , वो अपनी बहन के साथ दुर्योग से इस स्थिति में आ पहुचा है| उसका लीडर के ठिकाने कि गोपनीयता में कोई दिलचस्पी नहीं | उसका कहना है कि सैनिको के यंत्र्न्ना से बचने के लिये वो उन्हें सब कुछ बता देगा | उसका यह रुख एक क्रांतिकारी व्दारा उसकी हत्या का कारण बनता है क्योकि राज को न खुलने देना ही उसका काम है ... एक कैदी जेल से बच निकलने कि योजना बनता है लेकिन सवाल ये है कि ये आन्दोलन टूट चूका है वो कहता है दूर खदानों में कहो मजदूरों का आन्दोलन चल रहा है यानि व्यक्ति जोही उसका कोई विकल्प नहीं है है क्योकि उसका जीवन उसका अपना चुनाव है | आस्तित्ववाद मानता है कि जीवन साड़ी बाधाओ ,साड़ी असंगति के बावजूद व्यक्ति अपने लिये खुद

जिम्मेदार है | यह खुद उस पर निर्भर है कि वह अपने लिये क्या चुनता है यही उसी नाटक के पत्रों में भी दिखाई देता है |

<u>उत्तर राम चरित्र और प्रसन्ना</u>

उत्तर राम चरित्र हिन्दी में दो प्रस्तुति हुआ पहली बार 1991 दूसरी 2001 मे राष्ट्रिय नाट्य विधालय के रंग मंडल के साथ लेकिन एक ही दो नाटको प्रस्तुति होने के बावजूद दोनों अर्थ के स्तर से अलग थी | सातवी सदी के भावभूत के बारे में ये प्रसिद्ध है कि उनको अपने समय में समकालीनो से अधिक सहारना नहीं मिली | इसलिए उन्होंने कहा था कि इस निरवधि काल और विपुल पृथ्वी पर कोई तो कभी होगा जो मेरी रचना का महत्व समझेगा इतने वर्षो बाद भवभूति के इस नाटक को रंगमंचीय महत्त्व अपने में यह वक्तव देता है कि सच में पृथ्वी विपुल और काल नीरवधि है और रचना के महत्त्व को देर सबेर पहचाना जाता है |

जब प्रसन्ना ने 1991 में इस नाटक को किया था तो उस समय देश कि राजनीती पर हिंदुत्ववादी राजनीती का दबदबा बढ रहा था जय श्री राम बोलना एक समस्या सा बन गया था लेकिन यह भी समझना जरुरी है कि प्रसन्ना कि प्रस्तुति घोसित रूप से राजनैतिक नहीं था |

दूसरी बार जब 2007 में प्रसन्ना ने राष्ट्रिय नाट्य विधालय रंग मंडल के लिये इस नाटक को किया तो उस समय राजनैतिक प्रसंग बदल गया था | दूसरी बार प्रसन्ना ने उत्तर राम चरित्र को गृहस्थ राम का नाम दिया | यानी राम का मानवीकरण हो गया | सीता से अलग होने का दर्द लिये राम कि व्यथा कथा इस नाटक में उभर आयी |नाटक वही रहा पर प्रस्तुति का नजरिया बदल गया | करुणा भी और ज्यादा मानवीय हो गयी | वैसे इस नाटक में विनोद तत्व का भी प्रचुर समावेश हो गया इसमें रंगों का विशिष्ठ इस्तेमाल हुआ वेशभूषा में प्रसन्ना ने

जिन रंगों का इस्तेमाल किया उससे प्रस्तुति में एक रंगात्मक गहरे आगयी |
हिरमा की अमर कहानी

20 01 में कमानी सभागार | एक आदिवासी राजा कि सच्ची कहानी पर आधारित यह नाटक बस्तर के आदि वासी नृत्य ,गीत संगीत परिधान श्रगार सामग्री एवं सरल सीधा भाषा में बुना है | इस नाटक में हिमरा राजा कि भूमिका नया थिएटर के मरहूम कलाकार स्वर्गीय भुलवा राय ने अदा कि थी | उनके ससक्त अभिनय कि छाप हबीब साहब के अन्य नाटको में भी देखि जा सकती है | भुलवा राय एक अच्छे कलाकार के साथ एक अच्छे गायक भी थे | इस नाटक कि शुरुआत भी उन्ही के गए गीत जान से अपना मुकाम से मनवा से होती है | मंच पर लकड़ी के दो स्टूल कुर्सिया और पार्श्व में सफ़ेद दीवार पर दो जोड़ी ढाल और तलवार | हिमरा अपनी प्रेमिका बैगिन रानी के साथ शहरी कलेक्टर और उस्किलाल्ची पत्नी से मुखातिव होता है | अपने महल में आये दिन आदिवासी प्रजा को को दोनों दक्षिणा दे रहे है | आदिवासी प्रजा के प्रति हिमरा कि उदारता और स्नेह को एस नाटक के प्रथम दृश्य में ही बड़ी आसानी से अनुभूत किया जा सकता है |

राजा हिमरा अपनी सियासत तितुर वासना कि राजधानी मैनपुर में अपनी बैगन प्रेमिका और शराबी भाई बीरा के साथ अपने महल में रहता है बीरा का करेक्टर नया थिएटर के एक अन्य कलाकार गोविन्द दस ने ऐडा किया है रायपुर के कलेक्टर का किरदार राम ने तथा उस्किपतनी का किरदार नगीना तनवीर ने निभाया है | नगीना ने इस नाटक में कुछ गीत और नृत भी प्रस्तुत किया है|

भारंगम ,नई रंग भाषा ,सौन्दर्य ,युवावर्ग

कई नए और पुराने रंगों के साथ १२ वा भारत रंग महोत्सव अपनी नाट्य और उसकी सृजनात्मक परतो को संलग्न कर राष्ट्रीय नाट्य विध्यालय का यह थियेटर उत्सव सत्रह दिनों तक ,अलग -अलग भाषाओं ,बोलिओ ,जिब्रिश व नॉनवर्बल माध्यामो में ७३ नाट्य प्रस्तुतियों की रंगत बिखेरता रहा |

इसका मुख्य आकर्षण भारतीय युवा निर्देशकों व रंगकर्म के क्षेत्र में रंग भाषा खोजकारो की नाट्य प्रस्तुतिया रही |और युवा रंगकर्मी इसमें सफलता की ओर जाते नज़र भी आए |कम -से -कम एक संघर्ष नई भाषा को तलाशते हुए दिखा |रा .ना .वी .युवाओं को केंद्र में ला रहा है यह बात इससे एकदम साफ़ हो जाती है कि २००९ कि छात्र डिप्लोमा प्रस्तुतियाँ भारंगम का हिस्सा थी |अपने छात्रों की सृजन क्रिया को रंग महोत्सव में शामिल करना रा.ना .वी .का सकारात्मक व आगे बढ़ा हुआ संकेत है |

लेख में सभी नाट्य कृतियों पर लिखना तो थोड़ा मुश्किल हो जाएगा |यदि मिलाकर लिखे तो शायद बात बन जाए |रंगमंचीय दृश्यातमक भाषा व सौन्दर्य का जिक्र करे तो शीर्ष का रंगमंच जो भारत में निर्देशकों से जाना जाता है ,वह सब अपने -अपने स्थापित व कमाई हुई नाट्य भाषा व सौन्दर्य के साथ मौजूद थे जिससे आधुनिक भारतीय रंगमंच की पहचान भी स्थापित होती है और उसका कड़ा अभ्यास व प्रतिबद्धता भी |हबीब साहब के छतीसगड़ी कलाकार अपने लोक लेकिन आधुनिक बू व सहज राजनितिक विमर्श के साथ उतरे ,रतन थियम अपने दृश्यात्मक सौन्दर्य को लिए मणिपुरी मेहनतकश अभिनेताओं के साथ जिनमे उनका कोई सानी नही मिलता ,के .एन .पाणीकर स्तंभ की तरह अपनी शास्त्रीय भाषा शैली के साथ खड़े दिखे |हालाकि के .एन .पाणीकर अपने आलेख के साथ भी

शास्त्रीय रहे जबकि हबीब साहब व रतन थियम विदेशी आलेखों को भारतीय संस्कृति में समाते हुए मंच पर आए |युवा अभी अपना अभ्यास बना रहे हैऐसा स्वाभाविक भी है |लेकिन प्रतिबध्ता की ऊर्जा व कड़ा परिश्रम उनकी कलात्मक अभिव्क्ति में किसी मायने में नज़रंदाज़ नहीं है |बिलकुल नई रंगमंचीय भाषा व सौन्दर्य रचते हुए अपनी प्रस्तुतियों में कम -से -कम पर जरुरी संवाद का प्रयोग ,नॉनवर्बल प्रयोग की गम्भीरता और तकनीकी रंगमंचीय भाषा का व्याकरण इन सबके साथ अभिनेताओं का समायोजन करता दिखाई देता है |

उतर -पूर्व से आए रंगकर्म में प्रतिछवियो के साथ एंथ्रोपोलोजी आना शुरूआती नाट्य परम्परा का विशेष अंग बनने लगा है |वहां के रंगकर्म ,खासकर युवा रंगकर्म ,में एंथ्रोपोलोजी व गतिमय ऊर्जा का सौन्दर्य बोध उभरता नज़र आता है |

युवा रंगकर्म में ज्योति डोगरा (द डोरवे),अमितेश ग्रोवर (स्ट्रेंज लाइज़),रजत कपूर (हैमलेट :द क्लाउन प्रिस),दीपन शिवरमन (स्पाइनल कॉर्ड),मनोज मिश्रा (भारतकथा),रबिजिता गोगई (टैनिकलर (क्वीक डैथ),मोहिक ताकाल्कर (गार्बो),कौशिक सेन (दार्जिपरार मार्जिनारा)व सुनील शानबाग (सैक्स मौरालिती एण्ड सैंसरशिप)का काम दर्शको द्वारा काफी पसंद किया गया |इन सभी प्रस्तुतियों में से एक या दो को छोड़े तो ज्यादातर निर्देशक नई रंगभाषा को तलाशते हुए अपनी प्रस्तुति दे रहे थे |चाहे क्रियाओं की खोजबीन हो ,चाहे विजुअल ,वीडियो व साउंड तकनीक का प्रयोग हो ,चाहे फिर आलेख विषय -वस्तु व उसका प्रदर्शन हो ,सभी में नयापन व उसकी ताज़गी दिख रही थी|रा .ना .वी से अभी -अभी अपनी पढाई करके निकले बैच के लिए बेहद मुश्किल काम था इसे समायोजित करना ,इस वजह से प्रस्तुतियाँ थोड़ा प्रभावित तो हुई लेकिन दर्शको ने इन्हें पसंद किया ,हालाकि प्रतिकियाए कम ही मिल पाई

ऐसा नही है कि युवाओं को केंद्र में लानें के क्रम में रा .ना .वी .स्थापित व वरिष्ठ रंगकर्म को भुला देना चाहता है एम .के .रैना (चन्दा मामा दूर के),कन्हाई लाल व सावित्री बा (अचिन गोनर गाथा),राजेंद्र नाथ (जात ही पूछो साधू की),हबीब तनवीर (कामदेव का अपना बसंत ऋतू का सपना),रतन थियम (वैंह वी डेड अवेकन),के .एन .पाणीकर (उत्तररामचरितं),नीलम मानसिंह (लिटिल इयोल्फ़),भास्कर शेवालकर (मै राही मासूम),उषा गांगुली (भोर),माया कृष्णा राव (लेडी मैकबेथ),डी .रघुतमन (पालंगल)सभी अपनी रंग अदाओं के साथ सराहे गए |

भारतीय भाषाओं में इनके अलावा भी बहुत से निर्देशक अपनी नाट्य कृति के साथ हिस्सा ले रहे थे जिन्हें या तो हम देख नही पाए और कुछ थे जिन्हें देखते हुए हम यह समझने में लग गए कि रा .ना .वी .ने इन नाट्य कृतियों को क्यों चुना होगा ?

भारतीय रंगमंच के पक्ष व विदेशी रंग मंच को उत्सव में शामिल करने हेतु इस भारंगम में कुछ प्रतिरोध के स्वर भी सुनाई पड़े |लेकिन इस बार चीन की प्रस्तुति को छोडकर लगभग सभी प्रस्तुतियों से जो कलात्मक सहजता सीखने को मिली व कियोस्क (जापान),ओडिसियस कयो टिकस (इजरायल),शकुन्तला (पाकिस्तान),जानिज़ मिडनाईट गागल्ज़ (यू .के .)व अफगानिस्तान से आया पैपेट थिएटर यह सभी काफी रोचक ,मनोरंजक व विषय से भरपूर थे |

इस दफ़ा रंगमंच संगीत प्रस्तुति का जुड़ाव नाट्य -नाद के नाम से भारत रंग महोत्सव के साथ हुआ |दर्शको ने इसे नए प्रस्तुतिकरण की तरह लिया |हालाकि जब इसके आयोजन की चर्चाए शुरू हुई तभी से यह कैसे कार्यवन्ति होगा ,दृश्यों के टुकड़े के साथ होगा या बस अकेले गीतकार की अदायगी होगी |एक दो को छोडकर शायद उन नौ समूहों में से जो इस नाट्य -नाद में शामिल हुए ,उन्हें भी

ठीक -ठीक समझ में नही आया होगा कि इसे कैसे प्रस्तुत करना है |भारंगम के उद्घाटन समारोह में बंसी कौल द्वारा मंच पर की गई संरचना रंगमंच संगीत का इतिहास बताती ,विचारधारा और रंगकर्मी ,रंगमंच संगीत और राजनीति व विचारधारा के रिश्ते को सिरे से रेखांकित करती दिखी लेकिन कलात्मक पक्ष काफी सरलीकृत रहा |नाट्य -संगीत गायक व गायिकाए टहल -टहल कर व जगह बदलकर गाने के अलावा किसी नए क्रिया व्यापार से बेहद दूर रहे |

नाट्य -नाद में मोहन उप्रेती ,भास्कर चन्दावरकर ,बांगलार मंचगान ,इप्टा ,मराठी रंगभूमि ,रा .ना . वी ,हबीब तनवीर के .एन .पाणीक्कर व ब .व .कारंत समूहों का नाट्य संगीत मौजूद रहा | इनमे तीन -चार प्रस्तुतिय ही असरदार रही जिन्हें सचमुच दर्शको ने हाथोहाथ तालियों के गडगडाहट के साथ लिया | नाट्य मंचन के नाम से एक और कड़ी भारंगम में है जिसका इस समय बेहद आवश्कता है| सुबह नौ बजे से दोपहर दो बजे चलने वाले इस दो दिवसीय मंचन में चार विषयों पर गोलमेज़ कान्फेंस हुई | इसके विषय सेंसरशिप ,रंगमंच आकाइवा पोर्टल रंग्मंच संगीत व रंगमंच /मैडिसन /थैरपी रहे | हर विषय पर बोलने के लिये देश भर से 6 से 8 बकता थे इसी बात से आयोजन कि सघनता व गंभीरता देखि जा सकती है कि आधेदीन में दो विषयों पर आपको पूर्णविराम लगाना ही लगाना है | सुनते देखते वक्त ऐसा महसूस हो रहा था जैसे कुछ भी हाथ नहीं आ रहा था | यहाँ सवाल यह मन में आता था कि गोलमेज़ आयोजन कि क्या आभिप्राय है |क्या सिर्फ विश्योका परिचय देना या उनमे से उठ रहे नए सवालों व विचार को खोज बीन करना और उसके साथ साथ बनाना रंगमंच/मेडिसिन /थेरेपी जैसे विषयों को शामिल किया गया इस विषयों पर परिचय भी ठीक ठीक नहीं आ सका सबने दगा जोर से पर अपना अपना अलग अलग उलट साल्ट समझा हुआ |हमें इस पर और

विचार करने कि जरुरत है कि हमें मंचन में भारतीय रंगमंच कला विकास कि खातिर क्या निकलना है ,अमृत या कुछ और चुनैतीपूर्ण |

कुन्दमाला

2008 नवम्वर इसमे भोपाल कि संस्था परिषद् के छात्र छ्त्राए संस्कृत नाटक किया ये सब प्रयः नाटक कि दृष्टि से नौसिखिये होते है इसमें गुरुवायुर और श्रगेरी परिषद् से आये लड़के लडकिय केरल या कर्णाटक के पंरपरा नाट्यो में अपने घर या अयंत्र प्रशिक्षण पा चुके होते है .उनके अभिनय में नाटक का रूप अलग हो जाता है | दोनों ही प्रस्तुतिय बहुत ही अच्छी थी| नवम्बर में ही राष्ट्रिय नाट्य विधालय में विक्रमोव्रशीयम हुआ | हिन्दी के अनुबाद कही कही ठीक नहीं था ,और मूल के पाठ में कभी फेरबदल प्रयोक्ताओ के व्दारा किया गया था |कुछ दृश्य को सूजबूज के साथ फिर से रचकर आकर्षण बनाया गया था | कलि दसके इस नाटक का आरम्भ केदीदांव के व्दारा उर्वसी का अपहरण कि सुचना के साथ होता है |सूत्रधार कि प्रस्तावना समाप्त होते होते अप्सराओ कि करुण पुकार नेपथ्य से आने लगती है | कलिदास ने अफर्ण का प्रसंग सूच्या ही रहने दिया है इसे दीखाना नहीं चाह है , इधर कि प्रस्तुतियों में उर्वसी को क्रूर दानव पकड़ कर ले जाता हुआ मंचन पर प्रदर्शित किया गया उससे कालिदास कि रचना में कैशिकी वृत्त सकुमरार्ता और करुणाकुलता के बीच आर्भाती वृति के साथ रौद्र ras का अवतरण और विकट गति संचार का गुथांव हो जाता है | आगे चलकर उर्वसी को स्वर्ग में भरतमुनि के निर्देशन में लक्ष्मी स्वयंबर नाटक में लक्ष्मी के रूप में एक संवाद बोलना था जिसमे एक जगह पुरूसोतम के स्थान पर पुरुरवा बोल जाती है | भरतमुनि कुपित हो कर उसे धरती पर गिरने का शाप देते है | इन्द्र बात को सम्हाल लेते है और उर्वसी को अपने प्रिय पुरुरवा के साथ रहने कि अनुमति दे देते है | मूल नाटक में यह प्रसंग भरतमुनि के दो शिष्यो कि बातचीत में सूचित भर किया हुआ है

प्रदर्शित नहीं है | राष्ट्रिय नाट्य विधालय के प्रस्तुति में इस प्रसंग कौ उठा कर नाटक के भीतर एक नाटक रचा गया | हिन्दी अनुबाद के भीतर खेला गया संस्कृत नाटक संस्कृत नाटक कि पर्भाषिक शब्दावली में इसे गर्माक में भरतमुनि के व्दारा कराइ जा रही रिहर्सल को विस्तार दे दिया गया ,भरतमुनि उर्वसी से बार बार पुरूसोतम में मेरा मन लगा हुआ है इस संवाद को तन्मय होकर बोलने का उपदेश देते है जब उर्वसी तन्मय होकर बोलती है तो उसके मुह से पुरूसोतम के स्थान पर पुरुरवा निकल जाता है|

इसी तरह विधाधर कन्या उद्यावती कोपुरुरावा का तकते रहजन और उर्वसी का चिडकर उसे छोड़ कर चल देना अभिशप्त कुमारवन में प्रवेश् करकर लता बन जाना यह सारा प्रसंग भी विक्रमोशीयम के ऊँचे अंक में दो अप्सराओ के बात चीत व्दारा सूचित किया जाना | राष्ट्रिय नाट्य विधालय कि प्रस्तुति में इसे भी तब्दील किया गया | कुल मिलकर यह कालिदास के पाठ में प्रयोक्ता के उस पाठ के समावेश से सम्भ्नाओ कि तलाश का प्रयोग था |पर संगमनीय मणि नहीं आयुष नहीं पूरा का पूरा पांचवा अंक नहीं उसके वैगर कालिदास का परिप्रेक्ष्य तो पूरा नहीं हो पता संस्कृत नाटक के पीछे एक विश्व बोध है नाटककार कि समग्र द्रष्टि उसमे गुंथी है | इधर जो प्रस्तुति हो रही है ,उसमे निर्देशक नाटक का अपना पाठ तैयार करता है,उस पाठ में नाटककार का पाठ यदि टूटता है , इसकी चिंता नहि की जाती | औरंगजेब 2006 में नाटक औरंगजेब नाटक जिसका निर्देशन के.एस . राजेंद्रन ने किया है जिसमे मुख्य अभिनय महेंद्र मेवाती और श्रीवर्धन त्रिवेदी ने किया था महेंद्र मेवाती ने बहुत ही अच्छा अभिनय किया था औरंगजेब नाटक इतिहास को मंच पर इस तरह उतरा गया था कि जो अनछुहे हिस्से थे वो पता चला |

ओथेलो मोहन महर्षि ने ओथेलो का निर्देशन किया था श्रीराम सेंटर के हाल में नाटक हुआ था इसमें जो सेट बना था बहुत ही खूबसूरत था रैम्प स्टेज से ले कर लाईट रूम तक बना था जब ओथेलो रैम्प से चलकर स्टेज पर आता है वो दृश्य एक अद्भुत दृश्य था | और नाटक में सारे किरदार अपना अपना किरदार बहुत ही अच्छे से किया था |

जानेमन राष्ट्रीय नाट्य विधालय ने जानेमन नाटक किया था जिसका निर्देशन वामन केन्द्र जीने किया था ये नाटक किन्नर समाज के उपर था इसमें किस तरह से किन्नर अपनी विरासत को आगे बढ़ाने में लगे रहते है कुछ दृश्य तो इतना अच्छा था अलग ही अनुभव हो रहा था | किन्नर समाज का एक अपना अलग तरह कि दुनिया का निर्माण किया गया था| उनका अपना रहन सहन उनका गुरु चेला परम्पराअभी कुछ नया और अलग कुल मिला कर नाटक बहुत ही अच्छा था|

संगीत नाटक एकेडमी ने रंग स्वर्ण उत्सव किया था जिसमे देश के कोने कोने से नाटक आया था इसमें कई अच्छे नाटक हुए थे पर इसमें खास बात देखने को मिली कि कई फ़िल्मी कलाकार ने इसमें एकल प्रस्तुति किया था जैसे कि अनुपम खेर अमरीशपुरी नसुरुद्दीन शाह जैसे बड़े कलाकारों ने अपना प्रस्तुति दिया था अनुपम खेर जी ने कई कैरेक्टर किया सिर्फ पागडीया बदल बदल कर बहुत ही अच्छा अभीने किया और लोगो को बांध कर रख्खा 2001 से 2010 में एकल प्रस्तुति का भी चलन कभी लोकप्रिय हुआ |

अंधा युग (भारती)अंधेर नगरी (भारतेंदु) अच्छी प्रस्तुति हुई |मोहन राकेश समारोह में शामिल आधे अधूरे (निर्देशक त्रिपुरारी शर्मा) तृतीय वर्ष के छात्र राष्टीय नाट्य विधालय कि प्रस्तुति चार्वाक (निर्देशक राम गोपाल बजाज)रंगमंडल(रा. न. वी.)तुगलक ये सब प्रभावशाली नाटक थे , ये नाटक अपनी जगत वास्तु के कारण

भी काफी चर्चित रहा है | यदपि तुगलक का ताल्लुक इतिहास से है तथापि उसमे वर्णित कथ्य हमारे समय के उध्देल्नो से भरा हुआ है |यह बात आश्चर्यजनक रूप से सच है कि कर्नाड के नाटक अपने प्रदेश में चर्चित होते हुए भी भारतीय स्तर कि लोकप्रियता से दूर थे लेकिन हिन्दुस्तानी में प्रस्तुत किये गए तुगलक नेनातक और नाटककार को लोकप्रियता के शिखर तक पहुचाया |

तुगलक में जहा एक उस कालखंड कि एतिहासिक गाथा उसके अंतविरोधी के साथ प्रस्तुत कि है | वही उस व्यक्ति का भी चित्र प्रस्तुत करता है जो स्वप्नद्रष्टा है, जो आदर्शो कि खोज में है लेकिन जो अपने इर्दगिर्द के जगत कि मूल्य भ्रष्टतासे घिरकर पूरी तरह विघटित हो जाती है |

6 MONTH PROGRESS REPORT DATE...1 July 2017 to 31 Desember 2016

Name.....Arvind Singh

File No.....CCRT/JF-3/61/2015

चतुर्थ चरण

समकालीन रंगमंच के लिये भारतीय रंगमंच कि दिशाये और संभावना

नाटक हमारे जीवन से जुड़ा है ,हम उसे बाहर मंच पर आने देते है या नही ,यह सवालअपने आपसे होना चाहिए या नहीं ,हर रंगकर्मी के लिए यह सवाल एक मसल्हत रखता है |यह बात मेरे जहन में उस समय उठती है जब मै यह सुनता हूँ कि भारत में और खासकर हिन्दी प्रदेशो में नाटको की स्थिति बहुत अच्छी नहीं ,बल्कि खराब ही ज़्यादा है |ऐसा क्यों है ?रंगकर्म के साथ यह सवाल गहराई से जुड़ा है |एक बहुत घिसी -पीटी बात दिमाग में आती है |गांधी के बारे में तो सब जानते है कि दो नाटको ने जीवन के बारे में उनका नजरिया बदल दिया था |सत्यवादी हरिश्चन्द्र और पितृभक्त श्रवण |दो बाते है -एक है समकालीन मूल्यों के बारे में समकालीन कला का दृष्टिकोण तथा उन्हें व्याखायित करने की सामर्थ्य ,खासतौर से रंगकर्म के द्वारा |रंगकर्म जीवन को सीधा प्रभावित करता है |दूसरी बात है समकालीन रंगमंच या कला सामान्य जन जीवन के साथ कितना सरोकार रखते है |वह सरोकार सहानुभूतिपरक है या नकारात्मक |बिना सहानुभूति के शि विरोध भी पूरी तरह प्रभावी नही होता |कला और समाज का रिश्ता आदान -प्रदान का होता है |अगर समाज से आप अपने हुनर की स्वीकृति की आशा करते है तो आपको उसकी प्रचलित परम्पराओं और मान्यताओं को भी आरम्भिक रूप से स्वीकार करना होगा |भले ही आप उन्हें बदलने के लिए ऐसा करे |मैंने कही हो ची मिंह का एक भाषण पढ़ा था कि चाहे शासन हो या कला आप उसमे परिवर्तन लाना चाहते है तो उसे पहले समझीये ,समझने के लिए सहानुभूति का होना आवश्यक है | कई बार लगता है कि इतना प्रभावशाली माध्यम भारत जैसे गरीब देश में असफल क्यों रहा ?यहाँ हर प्रदेश में चाहें दक्षिण हो या उत्तर ,पूर्व हो या पश्चिम एक सांस्कृतिक लोक मंच की पृष्टभूमि रही है |उसका उद्देश्य केवल मानसिक मनोरंजन या रिलेक्सेशन ही नहीं था ,एक सामाजिक पक्ष भी था यानी सामूहिक -जीवन का विकास |

लोक मंच की उपस्थिति तत्कालीन सामाजिक जीवन में सकारात्मक हस्तक्षेप था |बचपन में बहुत तो नहीं ,परन्तु कुछ सांग और नौटंकी देखने का अवसर मिला |सांग और नौटंकी अपने आप में अपने अर्थ की परिचायक है |संग ,स्वांग ,सांग |संग संग रहने की प्रवृति तथा संघीयता |स्वांग कोई भी भूमिका ओढ़ लेने की क्षमता |पश्चिमी उत्तर प्रदेश में स्वांग शब्द रूप परिवर्तन के अर्थ में भी प्रचलित है जैसे क्या स्वांग या सांग भर रखा है |सांग का एक और भी अर्थ बताया गया था संगती -सामाजिक मूल्यों और प्रस्तुतियों के बीच तारतम्य ,बोल ,गान तथा लोक भाव व जीवन के बीच सामंजस्य | मुझे नहीं मालूम कि इन तत्वों के बारे में आज का रंगमंच कितना सचेत है |यक्षगान आदि कि बात तो अलग है आधुनिक रंगमंच पर शायद ही ये सब बाते लागू होती हो |हलाँकि बंसी कौल ने विदूषक संस्था के माध्यम से ,उससे पहले भी इस तरह के कुछ प्रयोग कियें है |

अब सवाल उठता है कि आधुनिक रंगमंच,लोक रंगमंच या उससे जुड़ी सामाजिक सामूहिकता के साथ सामंजस्य क्यों नहीं रख पाया ?आप कह सकते है कि लोक रंगमंच आधुनिकता की मांग और बदलते सामाजिक परिवेश के साथ सामंजस्य रखने में सक्षम नही था |यह जवाब मंचीय मर्यादा के अनुरूप नहीं नज़र आता क्योंकि लोक मंच के पीछे बहुत प्राचीन परम्परा थी |जैसे राजनीति और समाज के संदर्भ में भी हुआ |शायद मंच की स्थिति भिन्न थी उसके पीछे लोक जीवन का वृहद अनुभव था ,जिसका मानव जीवन के साथ गहरा रिश्ता रहा है |नौटंकी के साथ भी कमोबेश ऐसा ही है |पश्चिमी उत्तर प्रदेश में “नौटंक “बात का मतलब है खरी बात |नौटंकी की परम्परा शायद इसी खरेपन से जुडी है |यह बात अलग है कि समय और बदलती रूचि के साथ बाद में नौटंकी की शक्ल भी बदल गई |सभ्य या कुलीन कहे जाने वाले समाज की सांग और नौटंकी से दूरी बढ़ती

गई अश्लील कहा जाने लगा |क्या यह सिनेमा के साथ नहीं हुआ ?लेकिन उसके साथ यांत्रिकी और सामाजिक प्रतिष्ठा जुडी होने के कारण सिनेमा की स्थिति अक्षुण्ण बनी रही |लेकिन मज़े की बात यह है कि सिनेमा के क्षेत्र में अधिकतर वे फिल्मे स्वीकृत और सफल हुई जिनके साथ लोकजीवन का गहरा समन्वय था या है |उदाहरण के लिए वर्तमान समय में "लगान ,पुरानी फिल्मो में "मधुमती "|जहां तक टेक्नालॉजि का सवाल है इंसान उससे डरता ही नहीं अभिभूत भी रहता है |ठीक वैसे ही जैसे किसी जमाने में भूत -प्रेत या अलौकिक चीजों से उसका रिश्ता था |रंगकर्म में भी टेकनालॉजि का समावेश हुआ है लेकिन जीवनानुभव की प्रतिशतता उस अनुपात में नहीं बढ़ी | उसका नतीजा यह हुआ कि नाटक भी कुलीनता के घेरे में घिरकर रह गया |हालाँकि अनेक रंगरंगकर्मियों को मैंने कहते सूना है कि उनके द्वारा मंचित नाटक दसियों हजार लोग देखते है और शो पर शो होते है | सिनेमा की तरह पैसे खर्च करके देखने की प्रविति का विकास मंच नहीं कर पाया इसका तर्कसंगत कारण है |मंचनार्थ किया जाने वाला व्यय इप्टा ने नाटक को समान्य जन तक ले जाने की कोशिश की थी ,एक हद तक सफलता भी मिली |अब यह काम नुक्कड़ नाटक भी कर रहें है |परन्तु वह भी एक बिंदु पर आकर ठहर -सा गया है|देवेन्द्र राज अंकुर ने यह काम कहानियों के मंचन व्दारा करने की कोशिश की कुछ हद तक सफलता भी मिली ,वह सफलता मुख्यत :साहित्यकातेरों के बीच बनी रही है |

इसके लिए नाटककारो और निर्देशकों के किरदार की चर्चा जरूरी है |इसी के साथ अकादमियों की भूमिका भी कम महत्वपूर्ण नहीं |कुछ को छोड़कर अधिकतर नाटककारों ने अपने विषय ऐसे चुने जिनमे सामान्य दर्शकों की रूचि कम थी |या फिर वे इतिहास की तरफ गये |वहाँ शायद व्याख्या की गुंजाइश अधिक रही हो |कुछ मनोवैज्ञानिक ग्रंथियों को भी अपना विषय बनाकर चले

|हालाकिं कोई प्रमुख नाटककार नहीं हूँ ,मेरी समझ में यह बात बहुत साफतौर पर आई ,विषय या सन्दर्भ कितना भी महत्वपूर्ण हो पर इसका सम्प्रेष्ण सामान्य दर्शक के लिए शायद उतना सहज न हो तो इस तरह के विषय सामान्य दर्शक से सीधा रिश्ता बनाने में कम सहायक होते है |शायद इसलिए जहां तक मुझे मालुम है नरमेध इलाहाबाद रेडियो से ही प्रसारित हो पाया |शायद इसलिए कि तब स्टेशन डायरेक्टर ममताजी के पिता श्री विधाभूष्ण जी थे |अत्यन्त सज्जन व्यक्ति |

इधर कई बरसों से घोषणाए होती रहती है कि हिन्दी में नाटक नहीं हैं |ये घोषणाएं प्राय:वे रंगकर्मी करते है जिनके सर पर अंग्रेजी हावी रहती है और जिनका अपनी संस्कृति तथा हिन्दी भाषा अथवा साहित्य से कुछ दूर का भी रिश्ता नहीं |हिन्दी नाटक पढ़ने के नाम पर अपने अहं की अट्टालिकाओ से नीचे झाँकने की कोशिश उन्हें गवारा नहीं |इसलिए हिन्दी के नाटक को हिकारत की नज़र से देखते है ,इसलिय हिन्दी का नहीं “हिन्दी में “नाटक करते है जिसके लिए अनुवादों पर टूट पड़ते है |इससे अहं भी बना रहता है और नाटक भी हो जाता है |अपने बचाव के लिए इतना ही तर्क काफी है कि हिन्दी में कूड़ा है ,नाटक नहीं

कोई इनसे पूछे हिन्दी में रंगमंच भी कहां है ?हिन्दी में नाटक नहीं ,कहने से बेहतर यह कहना है कि हिन्दी में रंगमंच नहीं |जब रंगमंच नहीं ,नाटक कहां से होगा |जिसे आप हिन्दी रंगमंच कहते है वह हिन्दी रंगमंच है कहां ?जिस तरह रंगमंच पर नाटक करते है ,वह पश्चिम से आधा -पाधा उधार लिया रंगमंच है जिसे फिरोजशाह कोटली जैसी रंगभूमि पर खेलने की जरूरत पड़ती है ;और जो कभी -कभी भारी -भरकम सरकारी अनुदानो , औधोगिक घरानों ,दूतावासों और सेठों के धन पर चलते है |फलत:जो नाटक चुने जाते है वेअभिजात वर्ग के लिए होते है और मुट्ठी भर संरक्षको ,बड़े -बड़े बुधिजिवियो और आत्ममुग्ध कलाकारों की ही मानसिकता ,व्यक्तिवादी जीवन दृष्टि को ही संतुष्ट कर पाते हैं |जनता

और समाज की जड़ो अथवा अधिसंख्यक दर्शकों तक पहुँचना उनका उद्देश्य नहीं होता ,न वे वहाँ तक पहुँच पाने की क्षमता रखते है |राष्ट्रीय नाट्य विधालय या कुछ बड़े तामझाम वाले प्रायोजित रंग -प्रदर्शनों को मानदंड नहीं माना जा सकता |करोड़ो रूपये खर्च कर यह संस्था या ये लोग जो नाटक करते हैं तो कौन -सा तीर मारते हैं |उनके एक- एक नाटक पर जितना खर्च है उतना किस कस्बाई नाटककार या रंगकर्मी को नसीब होता है जहां दो पर्दे जुटाना तक भी मुश्किल होता है !

आज रंगकर्मी भी न प्रतिभाशाली है और न निष्ठावान |कुछ बीते युग की विभूतियों को छोड़ दे तो अधिकांश रंगकर्म को सीढ़ी मानकर अखाड़े में आ उतरते है |आज इसलिए कोई रंगकर्मी खतरा लेने को तैयार नहीं |वह पिटी -पिटाई लीक पर चलता है ,पिसे हुए आटे को (जिसेकोई और पीस चुका होता हैं)बार -बार पीसता हैं और सोचता है मैंने तीर मार लिया हैं |वह उन्हीं नाटको पर हाथ लगाता है जो समर्थ निर्देशकों या अभिनेताओं के द्वारा पहले सफलतापूर्वक खेले जा चुके हैं यह उनकी नजरों में महानता का एक ऐसा मानदंड हैं जिसके पीछे वे बुरी तरह पड़े है |इसका कारण यह भी है कि कुछ हिन्दीतर नाटककार अपने -अपने क्षेत्रों में ख्याति के मठों पर बैठे हैं |हिन्दी में रंगकर्म करने वाले उनकी शरण में जाना निरापद समझते हैं |उन नाटककारो को ,जो तथा कथित सफलता की गद्दी पर पहले से विराजमान हैं ,वे रंगकर्मी को प्रतिष्ठा दिला सकते है इस भावना के कारण भी अनुवादों की तरफ दौड़ होती हैं |

हम अनुवादों के मंचन का विरोध नहीं करते |उनका भी अपना महत्त्व हैं ,पर उसी पर निर्भर रहना और फिर प्रयोग के नाम पर डींग हाँकना बुरा है |केवल उनके बल पर हिन्दी नाटक और रंगमंच की श्रीवृद्धि नहीं हो सकती |कहा जा सकता हैं कि हिन्दी में जो थोड़े बहुत नाटक है उनका तो हम मंचन करते ही है |हाँ कुछ नाम उछाले जाते हैं |जो तिकड़मी नाटककार हैं वे किसी तरह अपने नाटक करा लेते हैं

,बाकी मुहँ देखते रह जाते हैं |कभी घटिया नाटककार भी अपने नाटक मंचित कर नाटककारो की श्रेणी में आने को आतुर रहते हैं |नाटककारो के ग्रुप है ,रंगकर्मियों के भी ग्रुप है |आज की गुटबाजी ,प्रचार तथा “अहो रूपम ,अहो स्वरम “के आदान -प्रदानी युग में लेखक के लिए नाटक लिखना ही काफी नहीं|उसके लिए पैसा ,संरक्ष्ण और समर्थ जुटाना भी जरूरी है |अच्छी समीक्षाए लिखवाना ,चर्चा करवाना फिर किसी निर्देशक के चरण चूमना भी आज नाटक लेखन का हिस्सा बन गया है |नाटककार को खुद मंच की तलाश करनी पडती है बिना स्वार्थ और भाईबंदी के कोई किसी का नाटक करे ही क्यों ?करेंगे भी वही नाटक जो स्वार्थ से जुड़ा हो या जो किसी तरह उनका वज़न बढ़ाता हो या जो सीढ़ी का काम देता हो बड़े नामो के साथ जुड़ना स्वंय को बड़ा साबित करने का ही एक तरीका बनकर रह जाता है |बड़े -बड़े नामों के पीछे दौड़ने के ये हालात स्वयं हमारे निर्देशकों ने पैदा किए है |वे अपने को सर्वोच्च मानते हैं ,जो नाटक वे नहीं करते उनके हीन होने के फतवे देते हैं |

हिन्दी में नाटक है या नहीं ;वे खेले जा सकते है या नहीं -यह फतवा देने से पहले रंगकर्मी को पहले यह जान लेना जरुरी हैं कि उसने हिन्दी के कितने नाटक पढ़े हैं :उसे भाषा की पकड़ या संस्कार भी हैं या नहीं :वह हमारी नाट्य परम्परा से कितना जुड़ा हैं ?वह अपने समाज ,अनुभूतियो ,अभिव्यंजना पध्दितीयो आदि से भी परिचित हैं

<u>भारतीय रंगमंच में नाटककार</u>

करीब 20 साल पहले आधुनिक रंगमंच से जुड़े देश के हम रंगकर्मी यह मानते थे कि रंगमंच में नाटककार का महत्त्व सर्वोपरी होता है| वह न केवल रंगमंचीय गतिविधियों का मुख्य अभिकर्ता होता था बल्कि उसकी भौतिकता के जुड़े हर पहलु

पर नियन्त्रण करता है ,उसका नौकर समझा जाता था | एक ऐसी भूमिका जो निर्देशक बिना किसी हिचक के निभाते थे |

आज कई कारणों से ,इस स्थिति को चुनौती दे पाना संभव हो सका है |इस सभा में यह बताना बेकार होगा कि कारणों से ये बदलाव आ पाया है | मेरे ख्याल से यहाँ मौजूद लोग इस प्रक्रिया से अवगत है जिसकी शुरआत दो दशको से पहले हुई थी | यही कहना पर्याप्त होगा कि रंगमंच के बुनियादी पहलुओ कि गहरी समझ और परम्पराओसे पुनः जुड पाने कि भारतीय रंगकर्मियों कि गहरी इच्छा ने आचानक उनके अन्दर यह जाग्रति पैदा कर दी | रंगमंच और यथार्थवादी को इसकी सम्भावना पूर्ण अभिव्यक्त में बाधक माना जाता है , जिसके कारण रंगमंचीय भाषा में गति आती है | इस बात का अहसास हुआ कि उन्मुक्त कलाकार रंगमंच कि शक्ति का स्त्रोत होता है ,न कि शब्द कि |

रंगकर्मियों में हमेशा से यह विवाद का मुद्दा रहा हैकि प्राचीन संस्कृत नाटको को आज दर्शक के लिये क्या सार्थकता है | उन्हें न तो इन नाटको के काव्य में कोई एसी बात नजर आती है न ही उसकी प्रस्तुति शैली में जिसे वे आज अपने समकालीन अनिभावो और जीवन पध्दति से जोड़ सके | इसमे कोई संदेह नहीं है कि भास् से ले कर भवभूति तक के सभी संस्कृत नाटककार भरत के नाट्यशास्त्र में उपलब्ध शास्त्रीय नियमो ,व्याकरण और शैली का अनुसरण करते है जिसका आज के रंगकर्मी कि यथार्थवादी अभिनय पध्दति से कोई सीधा साधा रिश्ता नहीं है यही कारण है कि संस्कृति के इन शास्त्रीय परंपरा को भारी भर कम दर्शन का जामा पहनाकर उसे जनमानस से काट देते है ,और दूसरी अवधारणा उन आधुनिक रंगकर्मियों कि है जो दर्शन और बौधिकता के चलते इन नाटको में अपने लिये ,अपने समय के लिये कुछ भी सार्थक नहीं ढूढ़ पाते | लिकिन गहराई से जाकर इस पूरी पृष्ठभूमि का आध्ध्यन किया जाय तो नतीजा कुछ और निकलता है |

हमारा समय और रंगमंच.

हमारे इस समय से हम कितने प्रभावित है |यदि ये समय ख़राब है तो इसे अच्छा समय बनाने कि कोई जद्दोजहद चल रही है क्या ? यदि चल रही है तो क्या हम उसमे शामिल है ? यौससे दूर खड़े है या उसके विरुध्ध खड़े है ? वर्तमान समय के साथ एक ख़ास बात ये है कि ये हमेशा ख़राब रहता है हमेशा पहले का समय अच्चा रहता है | आज का समय स्वर्णयुग न हो कर प्लास्टिक और बहुत से रसायन का है | आज का समय नई नई मोटरकारो और मोटरसाइकिलो का है | अमेरिका भागते नौजवानों का है | बड़ी बड़ी तनख्वाहो का पर बड़े बड़े उधोगो को सम्हालते और बड़े बड़े मुनाफा कमाते उधोगपतियों का है| काम आठ घंटे कि अवधारणा कि समाप्ति का है | हमारा समय जन्मकुंडली ,ग्रह दशाओ ,वास्तु दोषों का है | ग्रामीण क्षेत्रों में आत्महत्याओ का है | शहरो में हत्याओ का है | चित्र प्रदर्शनियों पर हमले का है | यह समय अंग्रेजो का है | यह समय मातृभाषाओ और लोकभाषाओ कि हत्या का है | यह समय सहज देसी आदमी कि समाप्ति और नकली आदमी का उद्भव का है | यह समय अटूट कमी कर रहे कुछ अमीरों का है | यह समय शास्त्रीय संगीत के जीवन संघर्ष का है | जब हम कलाओ ,साहित्य और रंगमंच कि बात करते तो हम हिन्दी कि भी बात करते है | उस हिन्दी कि बात जो बहुत शीघ्र इतिहास कि वास्तु होने जा रही है | हिन्दी कि हत्या में हम सब साक्षी है हिन्दी ही क्यों सभी देसी और प्रदेशी भाषाओ कि हत्या के हम सब साक्षी हो रहे है | जब हम राष्ट्रभाषा या अपनी भाषा में काम कर रहे होते है तो दरअसल हम एक निष्फल व्यायाम में लगे रहते है | हम साहित्य कि बात करते है | उस साहित्य कि बात करते है जिसका पाठक वर्ग बेहद सिकुड़ गया है या कहा जाय कि लगभग समाप्त हो गया है | जब हम रंगमंच कि बात करते है उसका दर्शक वर्ग आबादी का बहुत नगण्य हिस्सा है | आखिर रंगमंच में दर्शक

क्यों नहीं आते आज का माध्यम सिनेमा हो गया है | आज राज्य संस्कृत के मामले में जितना निष्ठुर है उतना शायद ही कभी रहा हो | आज का उन्मादी समाज कलाओ का जैसा दुश्मन है वैसा शायद ही कभी रहा हो | ऐसे में उद्देश्यपूर्ण सोद्देश्य सार्थक ,प्रतिबध्द ,कलात्मक, विचारशील ,विचारोतोजक इत्यादि किस्म के नाटक करना असंभव हो गया है | परसाई जी ने लिखा है कि कबीर अपने समय में काफी बड़े अखाड़े के खलीफ़ा रहे होंगे वर्ना हिन्दू मुसलमानों दोनो से दुश्मनी कर रचनाकर्म करना संभव नहीं होता | आज के समय में कबीर का कही पुतलादहन होता रहता या फिर किसी दुसरे देश में बैठ कर राष्ट्र के नाम सन्देश देते होते| उनके खिलाफ वारंट होते और हर शहर मुक़दमे दायर होते |

सरकार कानून के व्यवस्था के प्रति वचनबद्ध होती | नाटक करने के पीछे हम लोगो के सामने एक प्रेणना रहती है | कम से कम एक ग़लतफ़हमी तो रहती है कि हम दर्शको को सोचने समझाने का मसाला दे रहे है | आज के हालत में हम क्यादे प रहे है, ये विचारो का संकट है संयुक्त परिवार में टूटन तो बहुत पहले हो चुकी है | अब परिवाओ में छोटी छोटी इकाईया टूट रही है | मिया बीबी साथ नहीं रह पा रहे है | बहुत नए किस्म कि समस्यापरिवार में ,समाज में और जीवन में आ चुकी है | इन पर नाटक में बहुत सिमित काम हो रहा है | साहित्य तो फिर भी अपना काम कर रहा है पर कलाए अपनी भूमिका नहीं निभा पा रही है | कोई उदयशंकर दिखता नहीं जो न्रत्य को हथियार बना दे | नाटक को हथियार बनाने वाले कुछ कारीगर है तो पर संख्या बहुत सिमित है | विजय तेंदुलकर जैसा निर्भय और समझौताविहीन नाटककार बहुत दुर्लभ है |नए नाटक कम आ रहे है | और बहुत का हो पा रहा है |हमारी आज कि सच्चाई को अभिव्यक्ति दे ऐसे नाटक चाहिए जो नहीं है | आज का समय नाटको में अपनी उपस्थिति मांग रहा है |

कुछ कहानी रूपांतर कुछ एक्का दुक्का नाटक भी आये है जो हमारे समय को प्रतिबंधित करते है वर्ना चारो ओर अंधायुग और आधे अधूरे ही चले जा रहे है |

नाटक दुर्लभ और महंगा होता जा रहा है | नाटक में बहार कि उपस्थित दिखाई दे रहा है जबकि खरीददार नहीं है | मगर बेचने वाला कह रहा है कि माल बीके नहीं कोई बात नहीं पर सस्ता नहीं किया जायेगा | ये एक अलग किस्म का बाजारबाद है |जिस नाटक को आप युगांतरकारी कहते है जिस नाटक को आप श्रेठ कहते है उसका शो नहीं हो पाता उसका शो कोई करवाना चाहता है तो भी नहीं हो पाता | क्यों कि नाटक का मंचन का खर्च लाखो में पहुच चूका है | आयोजन करने वाला दे नहीं सकता | सरकारी संस्थान भी नहीं दे सकता | ऐसे श्रेठ नाटक का क्या मायने है| ये तो केवल इतिहास में दर्ज किए जाने के लिए ही तैयार हुए | इसमे काम करने वाला कैसे कलाकार है जिन्हें इसका शो करने कि कोई ललक नहीं |हर तरह के नाटक होते है |होते रहते है| अच्छे बुरे| मगर यदि नाटक करने के पीछे समाज को कुछ देने कि इच्छा हो तो फिर नाटक का अभिजात्य से जन कि ओर तो जाना ही होगा | नाटक को सस्ता जगह जगह खेला जा सकने वाला और सरल बनाना ही होगा | सरकारों के पास संस्कृति के लिये बजट नहीं है | यदि है वो हर साल घटता जाता है | ये कहना गलत कि रंगकर्मियों को अनुदान चाहिये , ये इनकी समस्या है| नाटक करनेवालों कि मूल समस्या अनुदान ग्रांट नहीं है |मूल समस्या है रंगमंच | जो है ही नहीं, न उसके बारे में और न उसकी उपयोगिता के बारे में कोई समझ है | हर शहर में एक कला क्षेत्र होना चाहिये जैसे हर शहर में स्टेडियम या अस्पताल या सड़क या नाली होती है| जैसे उनकी लागत और आय का अनुपात नहीं देखा जाता वैसे ही कला परिषद् कि आय और लागत का अनुपात नहीं देखा जाना चाहिये | ये स्थान तो बनाया जाना चाहिये और लगभग मुफ्त ए कला प्रदर्शनी ,रंगमंच,मुक्ताकाशी रंगमंच ,बाल रंगमंच ,फिल्म शो ,शास्त्रीय या

सुगम गायन ,वादन नृत्य व इनके पूर्वाभ्यास के लिये मिलना चाहिये | नवोदित कलाकारों को अच्छे से अच्छा प्रशिक्षण मिलना चाहिये | स्कूल और कालेजो में नाटक को पद्य जाना चाहिये तभी आज के समय में रंगमंच बच पायेगा वर्ना स्थिति कभी निराशाजनक है | जो कर रहे है वो दरअसल घसीट रहे है | ये सच है कि समय समय पर कही कही कोई जानुनी नौजवान पैदा हो कर कुछ दिन अलख जगा देता है पर अपना घर परिवार और रोजगार छोड़ कर केवल नाटक करने वालो कि पीड़ी लगभग ख़त्म होती जा रही है | जो कर रहे है उनकी हालात लगभग मज़बूरी है| वो न करे तो कहा जाय |

व्यावसायिक रंगमंच पर पुनर्विचार की जरूरत

कालजयी कृति सार्थक रंग -सृष्टि के लिए क्यों नहीं आ पा रही है -यह आज चिन्तन का मुख्य प्रश्न है |निस्सन्देह साहित्यान्दोलं के केंद्र में नाटक विधा रही है और सशक्त दृश्य माध्यम होने के कारण उसके साथ संस्कृति ,भाषा ,रंगमंच ,लोक जागरण ,मनोरंजन और कला के प्रश्न जुड़े रहें है जिन पर बदलते हुए समय के साथ नवीन संदर्भो में विचार करना अनिवार्य है| नाटक एक संश्लिष्ट कला है ,उसके इस संश्लिष्ट कला -रूप में साहित्य अर्थात नाट्यकृति केंद्र में है हिन्दी नाटक और हिन्दी रंगमंच दोनों की दृष्टि से यह बहुत अच्छी स्थिति नहीं है कि हम नाटक और नाटककार के महत्व या केन्द्रीयता पर बात कर रहें है |संशिलष्ट कला -माध्यम होने के कारण जितनी चुनौतियाँ नाटककार कि है ,उतनी ही रंगकर्मी कि भी |यह बहुत दुखद स्थिति है कि नाटक न पढ़े जाते है ,न किए जाते है ,न देखे जाते है और न साहित्यिक समीक्षा के केंद्र में आते हैं |

नाटककार और निर्देशक ,रंगमंच की विसंगति और विडम्बना ,दर्शक की उपेक्षा ,सामाजिकता के सवाल ,भारंगम का पिछले सभी वर्षो का संतुलित इतिहास

,वैशिस्टय और मूल्यांकन ,नाटककार और समीक्षकों के व्यक्तित्त्व ,साथ ही प्रमुख हिन्दी नाटकों की प्रस्तुतियों के निर्देशक और छायाचित्रों से नाटककार केन्द्रित अंक की पूर्ण छवि उभरती है |

नाटककार और निर्देशक के बीच की दूरियाँ ,संवाद हीनता ,असमंजस्य ,नाट्यकृति के भीतर अवांछित तोड़मरोड़ ,अहं (ईगो)और टकराहट के सवाल नये नहीं है और न पहली बार उठाए गए है |बीस -पचीस वर्षो से लगातार इस पर लिखा भी जाता रहा है और महसूस भी किया जाता रहा है |नाटककार के नाम का ही उल्लेख न करना तो बहुत बड़ा अपराध है |कुछ घटनाएँ भी होती रहीं है बड़ी -बड़ी संस्थाओ के आयोजनों ,उत्सवों ,सेमिनारों में सब होते थे ,नाटककार, साहित्यकार ,समीक्षक नहीं होते थे |बाद में धीरे -धीरे समझ में आया कि ऐसा क्यों हैं ?यह बहुत ही गलत और रंगकर्म की सजीव ,सजग सहभागिता की परम्परा के विरुद्ध था और यह तो एक मजाक है ,अपमानजनक स्थिति है कि नाटककार के नाम का उल्लेख ही न हो |हमने "रूपान्तर नाट्यमंच ,के 35 वर्ष के इतिहास एवं कर्म में ,लेखन में नाटककार को हमेशा केंद्र में रखा |नाटककार ,निर्देशक ,समीक्षक सबसे परिसंवाद हुआ |उनके और दर्शक के समीकरण की बाते भी अनेक बार उठीं |नाटककार कोई विवश ,लाचार प्राणी नहीं हैं |नाटक बेहद जटिल विधा है और मैं जानता हूँ कि नाटक लिखना सबके बस की बात नहीं है |कम निर्देशक लेखक होते हैं |जो निर्देशक लेखकीय प्रातिभा से युक्त है -वह है ,जैसे हबीब तनवीर |पर हर निर्देशक लेखकीय प्रतिभा से सम्पन्न होगा ,यह भ्रामक है |कोई नाटक लिखना सिखा सकता है -ऐसा मुझे नहीं लगता | लेकिन नाट्यपाठ ,चर्चा ,बहस (डिस्कशन),परिवर्तन ,पूर्वाभ्यास (रिहर्सल)और प्रदर्शनों के दौरान नाटककार ,निर्देशक ,अभिनेताओं का संवाद ,सहभागिता और उन्मुक्तता अनिवार्य है |और उससे निश्चित रूप से अन्तर पड़ता है |हमारे सामने लहरों के राजहंस का प्रत्यक्ष प्रमाण

है |अभंगगाथा (नरेंद्र मोहन)या कृष्ण बलदेव वैद के नाटको के साथ निरंतर यह क्रम चल रहा है |असहमति ,मतभेद ,परिवर्तन दोनों को स्वीकारना होगा - नाटककार को भी ,निर्देशक को भी |

“रंगकर्म में भी तकनीक (टेक्नालॉजी)का समावेश हुआ है लेकिन जीवनानुभव की प्रतिशतता उस अनुपात में नहीं बढ़ी |उसका नतीजा यह हुआ कि नाटक भी कुलीनता के घेरे में घिरकर रह गया |जीवनानुभव की गहनता और व्याधि आज की सबसे बड़ी ज़रूरत है |जो अच्छे नाटक ,मौलिक हिन्दी नाटक ,हिन्दी नाटक लेखन के इतिहास को बहुत आगे ले जाने वाले सिद्ध हुए थे सातवें -आठवें दशक में ,मस्लन प्रजा ही रहने दो ,हानूश ,माधवी आदि ,वे कितने ,कहां रिपीट हुए ?ज़्यादातर बंसी कौल ,एम् .के .रैना तक सीमित रह गए |देश भर में प्रस्तुति - श्रृंखला से जो माहौल बनता है -नाटककार ,निर्देशक ,समीक्षक ,दर्शक के बीच जो दृष्टि बनती है ,वह क्यों घटती गयी ?ऐसा नहीं है कि ये प्रश्न आये नहीं है -बार - बार आये है पर हमने इनका सामना नहीं किया |तकनीक (टेक्नालॉजी),भव्यता लाखो की प्रस्तुतियों में मायावी झाँकियो ,ग्लैमर की बात सबने कहीं है |

यह मेरे लिए सचमुच एक खबर है और नई खबर है कि “लोकप्रिय ,नाटक खेले नहीं जाते |अगर ऐसा है तो यह आश्चर्यजनक ,गम्भीर और विचित्र स्थिति है |सचमुच पारसी नाटक भीड़ बटोर सकते है -शैलीब्द्ध नाटको से ,संरचना (क्म्पोजिश्न्स)से लोग ऊब चुके है |उन्हें क्यों नहीं लगातार करके दर्शक ,बटोरे जाते ?पुराने लोकप्रिय नाटक भी नहीं रिपीट होते -यह कौन सा जोड़ -तोड़ है ?यह तो बहुत सुखद है दर्शक बनाने के लिए |हमारा दायित्व नाटक को “सरकारीकरण ,से मुक्त करके आत्मनिर्भर ,लोकप्रिय बनाना हो तो दर्शक भी उमड़ेगे और लेखक भी |आज इस पर विचार करना अनिवार्य है कि हमारी मान्यताएँ क्या है ?क्या हम ऐसा कोई दूरगामी लक्ष्य लेकर चल रहे है ?प्रशिक्षण के साथ अध्यापन

,शिक्षण ,इतिहास ,अध्ययन का महत्त्व भी प्रतिष्ठित होना चाहिए |प्राय: जयशंकर प्रसाद के नाटकों के प्रति अज्ञानता ,अवमानना का भाव ,हिन्दी भाषा और उसमें अंतनिर्हित काव्य की लय की अनुभवहीनता ,उच्चारण का भ्राष्ट रूप और संवादों की जल्दी -जल्दी अदायगी देखी जाती है |देश भर में ऐसे व्यक्तित्व हैं जो प्रसाद के नाटकों के अध्यापन ,आलोचना ,मंचन में कार्यरत है -ऐसे विशेषज्ञों से भी सम्पर्क ,प्रशिक्षण कराना चाहिए |प्रसाद के नाटको को एक बार करके बंद करने की नहीं ,प्रयोगधर्मिता और भाषा -अधिकार की अपेक्षा है |

भारत रंग महोत्सव की परिकल्पना अपने आप में बहुत महत्वपूर्ण है |मैलिक नाटको को ,हिन्दी के नए -पुराने श्रेष्ठ नाटकों ,नाटककारो और निर्देशकों के रंगकर्म को बड़े फलक पर लाने का वह बड़ा माध्यम है |इसे जितना ही वैविध्यपूर्ण ,सशक्त बनाया जाए और परीसंवाद का ,सम्मिलं का विचार -विमर्श का आधार बनाया जाए ,उतने ही अच्छे परिणाम होंगे |भारतीय भाषाओं ,क्षेत्रीय बोलियों और पूरे हिन्दी प्रदेश में फैले रंगकर्म को ,विदेश की प्रस्तुतियों को एक साथ मंच और संवाद देना दर्शको को खीचने का बहुत बड़ा आधार है |

प्रतिवर्ष होने वाला भारंगम सचमुच रंगान्दोलं और देश -भर की गतिविधियों ,अभिनेताओं ,निर्देशकों ,नाटककारो ,समीक्षकों ,रंगकर्मियों को एक साथ लाने का बहुत प्रमुख सर्जनात्मक आधार के साथ -साथ एक कसौटी बन सकता है |

राष्ट्रीय नाट्य विधालय अपने देश का अकेला ,बहुत महत्वपूर्ण संस्थान है एशिया के इतने महत्वपूर्ण ,प्रतिष्ठित संस्थान ने भारतीय रंगमंच और हिन्दी रंगमंच को बहुत विकासमान ,सम्भावनापूर्ण और सर्जनात्मक बनाया है |निर्देशक ,रंगकला ,रंगभाषा ,अभिनेता ,सभी पक्षों की विशेषज्ञाता को उसने प्रतिष्ठित किया है लेकिन रंगान्वेष्ण के वैविध्य में निर्देशक ही केन्द्रीय व्यक्तित्त्व होता गया और क्रमश:

नाटककार छुटता गया |इस स्थिति को बहुत वैचारिक ,सम्वेदनात्मक एवं सर्जनात्मक ,शाश्वत धरातल पर महसूस करना और उस पर संवाद करना हमारा दायित्व बनता है आज हमारे मूल प्रश्न नाटककार की सत्ता या निर्देशक और नाटककार के सह -अस्तित्व के उतने नहीं है ,जितने उनके सार्थक सम्बन्ध द्वारा नाटक और रंगमंच की जीवन -शक्ति को आज के सन्दर्भ में पुनसृजित करने के है

रंग -कर्म का रंगारंग स्वरूप |

रंग -प्रक्रिया के विविध आयाम शीर्षक पढ़कर आशा जागृत होती है कि साहित्य की जिस विधा पर आलोचकों ने सर्वाधिक कृपणता से काम लिया है उस पर कुछ सुनियोजित ढंग से काम किया गया होगा |भूमिका पर एक नज़र डाल कर ऐसा लगता है मानो इस पुस्तक में संकलित सभी लेख एवं टिप्पियाँ किसी विचार -गोष्ठी के वैचारिक बिंदु है परन्तु जरा आगे बढ़ने पर पता चलता है कि कुछ लेख सातवें -आठवें दशक में लिखे गए थे |इसका कारण सम्भवत:यह है कि जो विद्वान् हरियाणा के यमुना नगर में स्थित डी .ए .वी .गर्ल्स कॉलेज में आयोजित संगोष्ठी में निमंत्रित होने के बावजूद न आसके उन्होंने अपने पहले कभी लिखे हुए लेख इस संकलन के लिए भेज दिए |संजीव चौधरी का लेख ,साठोत्तर हिन्दी नाटक ;वस्तुगत विविध प्रयोग ,इसी कोटि की रचना है लिहाजा आधे -अधूरे (मोहन राकेश),आठवाँ सर्ग (सुरेन्द्र मोहन),त्रिशंकु (ब्रजमोहन शाह)तथा पोस्टर (शंकर शेष)तक पहुंचकर चर्चा समाप्त हो जाती है |हरियाणा में आयोजित इस संगोष्ठी में राजनीती की भाँती

क्षेत्रिय सरोकारों को इस हद तक खींचा -ताना गया है कि भारत लाल मदान का लेख तो हरियाणा में रचित नाट्य -रूपों और कलाकारों की परिधि का चक्कर काट कर ही संतुष्ट हो गया है राम गोपाल बजाज का विपुल शीर्षक दुनिया का रंगमंच आशा की एक नई हिलोर लेकर आता है एकबारगी शीर्षक में निहित कटाक्ष भी ससिम्त कर देता है |परन्तु किन्ही वन्दना दत्ता से अंग्रेजी में की गई बातचीत का यह उल्था लेखोपयोगी सुनिर्द्रिस्ट एकाग्रता में न्यून है |

इस प्रकार के योजनाबद्ध संचयन निकालते समय केवल प्रतिष्ठित नाम काफी नहीं होते |आखिरकार दीवाने -ग़ालिब का हर शेर या गज़ल तो एक पाए की नहीं है |इसलिए नाम के साथ- साथ रचनागत चुनाव भी अनिवार्य है |सार्वदेशिक रंगमंच की सम्भावनाओं के प्रेरक अनुभवी रंगकर्मीयों से जो मार्गदर्शन अपेक्षित है वह न मिलने पर खालीपन का एहसास होता है नाट्यलोचन में अत्यधिक सावधानी निर्भीक नाट्य विमर्श के रास्ते में आ जाती है |आपबीती के बहाने नाट्यलोचन पर एक विमर्श में सत्येंद्र कुमार तनेजा आज के संदर्भो से दिख रहे है भारतेंदु और प्रसाद की चर्चा के बाद वे दाएं -बाएँ की बहस की तरफ मुड़ गए हैं | एक बात और सोचने को मजबूर करती है कि नाटककार ,निर्देशक अथवा नाट्य विमर्श करता जब सिद्धन्त्कार की भूमिका अपनाते है तो केंद्र में वे आपबीती ही क्यों रखकर चलते है ?कहना न होगा कि हर नियम के अपवाद अवश्य हुआ करते है परन्तु सामान्यतया अन्य

विधाओं की आलोचना लिखते हुए आत्म्ब्धता कम या नहीं के बराबर दिखाई देती है |राजेन्द्र यादव ,कमलेश्वर और अशोक वाजपेयी का गध-साहित्य इसका जीता -जागता उदाहरण है |इसके ठीक विपरीत नरेंद्र मोहन अल्प प्रस्तावना पश्चात तत्काल बड़ी बेतकल्लुफी से लिखते हैं -

आज के हिन्दी रंगमंच की भाँती इन लेखो में प्राय:अतीत के झरोखे ही खुलते बंद होते है|रंग प्रक्रिया के विविध आयाम में पिछले दस -पन्द्रह वर्षो का रंग -पटल अदृश्य हैं |कुछ लेख हिन्दी नाटक को विषय के रूप में पढने वाले छात्रों के लिए उपयोगी होंगे परन्तु नाटक और रंगमंच के द्व्दात्म्क सम्बन्ध को समझने के लिए इनसे कोई अंतदृष्टि मिलना कठिन है वर्तमान स्थिति के नाम पर इस संग्रह में विश्व प्रभा लिखित ट्युटोरियल सुलभ लेख भी है |सम्पादन कर्म का तकाजा हैं कि सम्पादक की कलम के निशान दिखाई दे |

महेश आनंद और जयदेव तनेजा जैसे अपवादों को छोडकर इन लेखो में नाट्य -जगत की मौजूदा चुनौतियों का उल्लेख कम मिलता हैं |क्या कारण हैं कि इस जनोन्मुखी विधा के बारे में हम आज भी आज की बात करते कतरा रहें है|क्या कारण है की कुछ नाटको की शेल्फ लाइफ निरवधि है और मौलिक नाटको के अभाव की सुमिरनी महांम्रत्युन्ज्य जाप से टक्कर ले रही क्या किसी को यह नहीं पूछना चाहिए कि नाटक को छोड़कर साहित्य के उपांगो को मंच पर पढ़ देना भर क्या नाटक है ?भरत मुनि के “न तत ज्ञानं न तत शिल्प ,की इस नई व्याख्या पर

कोई विमर्श क्यों नहीं होता | डॉ.नित्यानंद तिवारी और नन्दकिशोर आचार्य ने इस ओर संकेत अवश्य किया है पर खुलकर इन मुद्दों पर ये लेख प्राय:मौन है |प्रयोग के तौर पर नव -नवोन्मेष स्वीकार्य हो सकता है परन्तु एक अभियान के तौर पर गल्प और काव्य को मंचित दृश्य बनाना कहीं पेरिस्त्रोइका और ग्लास्नोस्व तो नहीं ?यह प्रश्न कोई क्यों नहीं उठाता कि हमारा रंगकर्म आज भी चालीस वर्ष पुराने नाटको की प्रस्तुतियों या फिर इब्सन जैसे विदेशी नाटककारो को स्वस्ति -मन्त्र क्यों मान बैठा है ?

यह प्रश्नाकुलता यदि कहीं मिलती है तो वह है महेश आनंद का लेख ,"नया रंग मुहावरा ,|रंगकर्म का विश्लेषणपरक इतिवृत प्रस्तुत करने वाला यह लेख सम्भवतः सबसे अधिक जानकारी प्रदान करने वाला है |लच्छेदार भाषा और यायावर विचारों के कुहासे से बचते हुए लेखक ने सुव्यवस्थित ढंग से नाटक और रंगमंच के द्वंदात्मक सम्बन्ध को पाठक तक पहुँचाया है |नीति -निपुणता को टाक पर रखकर बेधड़क अपनी बात कही है -

"बहुत कुछ इन्हीं कारणों से तथा मंडलियो की अपनी सीमाओं के कारण भी निर्देशक सुरक्षित नाटक खेलने के लिए अनुवादों का सहारा लेने लगे |"अथवा

"इस आठवें दशक के बाद हिन्दी मंडलियाँ बिखरने लगीं और रंगकर्मी सिनेमा या दूरदर्शन की ओर भागने लगे |ऐसा नहीं कि रंगकर्म एकदम

समाप्त हो गया ,बल्कि पहले जैसी उत्तेजना या तलाश का सिलसिला नहीं बना |”

नुक्कड़ नाटक विवाद सम्बन्धी दो लेखों में क्रमश:शम्सुल इस्लाम और नीलिमा शर्मा ने अपनी जानदार शैली में इस नाट्य शैली पर पूरे विश्वास के साथ चर्चा की है |इस तरह के लेख हिन्दी नाटक के विकास और विवर्तन को समझने में नाट्य शोधार्थियों के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध होंगे |अपने लेख नाटया लेख निर्देशक और रंगशाला अन्तर सम्बंधो की तलाश में जयदेव तनेजा ने नाटक ,रंगमंच और रंगशाला के अन्योन्याश्रित सम्बन्ध को उसकी ऐतिहासिक पृष्टभूमि में अपनी गवेषणापरक शैली में बखूबी पेश किया है |कहना न होगा कि नाटको की भाँती रंगशालाओ के क्षेत्र में अपेक्षित विकेंद्रीकरण नाटक को जीवित रखने की पहली शर्त है |बीसवी शताब्दी की अवसान वेला में रंगकर्म के शैथिल्य का बहुत बड़ा कारण प्रेक्षाग्रहों की सिमित संख्या ,मंचीय प्रस्तुति के लिए प्रायोजित आर्थिक सहायता की कमी एवं लेखक तथा निर्देशकों के मध्य तनातनी है |इस पक्ष पर भी ध्यान देना आवश्यक है कि साहित्य में नाटक एकमात्र ऐसी विधा है जिसे निर्देशक के रूप में किसी दुसरे सर्जक का मुँह देखना पड़ता है | इसी का परिणाम है कि नाट्य लेखक भुवनेश्वर प्रसाद के नाटक नाट्येतिहासबनकर रह जाते है | अच्छी से अच्छी नाट्य कृतिया किसी ग्रंथालय के शेल्फ़ में एकांतवास करती है तो दूसरी ओर साठ सतत्तर साल पुराने गल्प के कलाबध्द

यथार्थ को ही सजा संवारकर मंच पर गल्पात्मक बनाने कि ज़िद चलती रहती है | प्रस्तुत पुस्तक में भी कविता और कहानी के मंचीय स्वरुप पर तो तीन लेख है परन्तु गल्प के रंगमंच के पुरखे यानि कहानी और उपन्यास के रेडिओ रूपांतरणोंको किसी ने भूलकर भी याद नहीं किया | यदि नन्द किशोर आचार्य के अनुसार ,अभिनय ही है नाट्य लेखन का निकष तो रेडिओ पर किया जनर वाला अभिनय तो वाचिक नट कला और ध्वनि प्रभवो कि अग्नि परीक्षा है | स्वतंत्रता के बाद रेडिओ से प्रसारित ध्वनि मंच कि प्रस्तुतिया जिन्हें कहानी उपन्यास का ध्वनि मंच कहा जा सकता है ,नाट्य कर्म कि अविस्मरणीय कड़ी है | चेखव कि कहानी द बूर का रेडिओ रूपांतरण गंवार और उसमे सलीमा , रज़ा के अभिनय को भुलाने के लिये किसी विशेष भेषज कि आवश्यकता होगी \ छठे सातवे दशक के बड़े नाम जैसे ओम शिवपुरी और सुधा शिवपुरी ,पहले रेडिओ पर अपनी आवाज के जादू से ही पहचाने गए थे |इक्कीसवी शताब्दी में नाट्यलोचन को निरपेक्ष भाव से त्रिकाल मैत्री का अनुष्ठान करना होगा तभी नाटक केंद्र में आ पायेगा |

<u>भारतीय हिन्दी रंगमंच ठोस रूप ले रहा है...</u>

अगर प्रांतो की रचना को मानदंड माना जाए तो किसी भी भारतीय भाषा से हिन्दी कम से कम नौ -दस गुना बैठती है |हर भारतीय भाषा लगभग एक ही प्रांत में बोली जाती है जबकि हिन्दी उत्तर प्रदेश ,बिहार, झारखंड मध्य प्रदेश ,छतीसगढ़ ,है|अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी इसका काफी फैलाव

हो चुका है इसका अर्थ यह कि हिन्दी में कोई कलाकर्म होता है तो वह प्रादेशिक भाषाओं की तुलना में इकट्ठे कई गुना हो जाता है |रंगकर्म को लेकर भी यही बात है |

निश्चय ही आज तक मराठी और बांगला में जो रंगकर्म होता रहा है ,वह हिन्दी से कई गुना अधिक व्यापक है |लेकिन हिन्दी में रंग्कर्म बढ़ता जाए तो वह अचानक सर्वत्र फैलता दिखाई देगा |ऐसा हो भी रहा है |फिलहाल उसके बिखरे होने के कारण उसका एकमुश्त स्वरूप सामने नहीं आ रहा है |

हिन्दी रंगकर्म देश के विविध प्रांतो में लगभग अस्सी -नब्बे नगरो में नियमित-अनियमित हो रहा है |यह छोटे -बड़े कई शहरों में सक्रिय है|अगर प्रांतवार इन नगरो पर नजर डाले तो इसकी संख्या अच्छी -खासी है |क्या मराठी ,बांगला ,कन्नड़ ,मलयालम का रंगकर्म अपने -अपने प्रांतो के इतने नगरो में होता है ?नहीं होता है ,लेकिन इन प्रातो में यह नियमित और धुँआधार तरीके से होता है इसलिए ठोस रूप में उभर कर आता है |मराठी और बांगला में जब नया नाटक उठाया जाता है ,तो यही सोचकर कि इसके सैकड़ो मंचन तो करने ही है |इसके विपरीत ,किसी एक नगर में दमखम लगाकर हिन्दी नाटक का एक ही मंचन होता है आगे भगवान -भरोसे |मराठी में अलग -अलग बहानों -तरीकों से भी रंगकर्म होता रहता है -कामगार नाट्य स्पर्धा ,शौकिया

नाट्य स्पर्धा ,एकाकी स्पर्धा आदि |शौकिया रंगकर्मियों के लिए जो नाट्य स्पर्धा होती है ,वह कोई ३० -४० दिनों तक चलती है |

महाराष्ट्र के मुम्बई ,नागपुर जैसे पाँच -छह शहरों में हिन्दी रंगकर्म का फैलाव एक और स्तर पर हो रहा है |पहले विदेशो में मराठी और गुजराती नाटको की ही मांग थी ,अब हिन्दी नाटको की भी मांग है |कई हिन्दी रंगकर्मी एक माह या इससे अधिक अवधि के लिए विदेश दौरे पर जाते है |नसीरूदीन शाह ,परेश रावल ,अनुपम खेर ,फ़िरोज़ खान ,फारुख शेख, शेखर सेन नादिरा बब्बर ,मनोज जोशी ,राजेन्द्र गुप्ता ,नीना गुप्ता ,आदि रंगकर्मी यूरोप ,अमेरिका कनाडा जाते रहते है |अब तो सिंगापुर ,हांगकांग ,दुबई खाड़ी के देश भी इस रंगकर्म दौरे में शामिल हो चुके है |बहरहाल ,ये नाटक मूलतः लोकप्रिय या मनोरंजक शैली के होते है |हिन्दी जिस गति से राष्ट्रीय तथा अंतराष्ट्रीय स्तर पर बढ़ रही है ,उसे देखते हुए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी रंगकर्म के फैलने की पूरी सम्भावनाए है |

फ़िलहाल ,देश में तीन प्रकार के हिन्दी रंगकर्म हो रहा है -दिल्ली का रंगकर्म ,मुम्बई का रंगकर्म तथा शेष भारत का हिन्दी रंगकर्म |इन दिनों रंगकर्म का स्वरुप भिन्न -भिन्न है |दिल्ली में दो स्तरों पर हिन्दी रंगकर्म हो रहा है |एक राष्ट्रीय नाट्य विधालय प्रणीत ,दुसरा ,भिन्न नाट्य संस्थाओं द्वारा किया जा रहा रंगकर्म |प्रमुख तो राष्ट्रीय नाट्य विधालय अर्थात एन ,एस .डी .का ही माना जाएगा |इसका मूल स्वरूप

संस्थागत रंगकर्म है देश में कहीं भी हो रहे हिन्दी रंगकर्म को जांचने का आधार अगर आर्थिक दशा को बनाया जाए तो परिणाम अलग -अलग आएँगे |यही अर्थ होने के कारण एन .एस .डी .का रंगकर्म सम्बन्धी सोच और उसकी शैली अलग बन गई है |नाटको का चयन करते समय उसकी यह सोच और शैली लागू होती है |कहीं न कहीं इस पर भव्यता ,अकादमिक दृष्टिकोण हावी रहता है इसके अपने लाभ है |लेकिन इसी को मानदंड मानकर शेष हिन्दी रंग कर्म को देखना भी एक प्रकार से शेष हिन्दी रंगकर्म के प्रति आन्याय है |एन .एस.डी .में बाहरी निर्देशकों से भी रंगकर्म कराया जाता है |इससे एन .एस .डी .के रंगकर्म को अवश्य ही व्यापकता और भिन्नता प्राप्त होती है |किन्तु जरूरी नहीं है कि हर हिन्दी रंगकर्मी एन .एस .डी .की सोच और शैली से ही प्रेरणा ले ||ऐसा होने का मतलब रंगकर्म जगत के भीतर की लोकतन्त्रीय विचारधारा का समाप्त हो जाना है एक ही ढर्रे का रंगकर्म उसे साँचाबद बना देगा |शेष हिन्दी रंगकर्मियो में हीनता का भाव पैदा कर देगा |मराठी और बांगला का रंगकर्म स्वप्रेरणा से विकसित हुआ रंगकर्म है ,इसलिए सुदृढ भी है |अभी तो हिन्दी रंगकर्म विकसित ही नहीं हुआ ,अभी से वह किसी का पुछल्ला बन जाए तो उसका विकास कुंठित हो सकता है |

इसे इस दृष्टिकोण से भी देखा जाणा चाहिए कि भारत में अलग -अलग ढंग की समाज रचना है ,अलग -अलग परम्पराए ,अलग -अलग जीवन

शैली |ऐसी स्थिति में अकेली दिल्ली से निकला फरमान कितना कारगर और स्वीकार्य हो सकता है |यह भी तो देखा गया कि एन .एस .डी .से निकले स्वतंत्र विचारों के रंगकर्मियों ने भी अपना स्वतंत्र रंगकर्म विकसित किया|ब .व .कारंत ,रतन थियम ,बंसी कौल आदि इसकी मिसाल्रे है |हबीब तनवीर भले ही एन .एस .डी .से न हो ,लेकिन किसी रंगकर्म प्रशिक्षण संस्थान से तो उन्होंने भी संस्थान का पगड़ा स्वीकार करने के बजाय स्वतंत्र शैली विकसित की ,उसे तो प्रवर्तन भी कहेंगे |यह देखा गया है कि एन .एस .डी .से निकले रंगकर्मियों पर कालांतर से व्यवहारवाद असर दिखने लगता है बहरहाल ,एन .एस .डी .जैसे संस्थानों का स्वागत ही होना चाहिए इसलिए कि यहाँ संसाधनयुक्त रंगकर्म होता है ,अभावग्रस्त रंगकर्म नहीं |आखिर क्यों हर बार साहित्य और कला क्षेत्र कंजूसी का सामना करे ?यह पैसा जनता का ही है |हर क्षेत्र का व्यक्ति पैसा लुटे और कलाओं के विकास के लिए धता !एन .एस .डी .रंगकर्म इसलिए भी कि एक समर्पण भावना से अनुशासन में रह कर विविधरंगी रंगकर्म हो सके |इसलिए भी कि अलग -अलग भाषाओं की क्लासिक कृतियों को समय -समय पर मंच पर उतारने के अवसर मिलते रहें |इसलिए भी कि एक संस्थागत मार्गदर्शक रंगकर्म क्षेत्र में बना रहे |इसलिए भी कि ,एन .एस .डी .के समांतर भिन्न -भिन्न शहरों में रंगकर्म प्रशिक्षण केन्द्रों कि व्यवस्था के लिए वातावरण बन सके |

मुम्बई का हिन्दी रंगकर्म अलग है |फिलहाल ,पूरे देश में मुम्बई ही ऐसा शहर है जहां नियमित पेशेवर हिन्दी रंगकर्म होता है और इस पर अंग्रेजों ,ऐंग्लो -इंडियन्स ,पारसियों तथा सम्पन्न स्थानीय निवासियों की छाप रही है यहाँ परम्परागत कलाओं को नहीं ,आधुनिक और पाश्चात्य कलाओं को अधिक प्रश्रय मिला |पारसी रंगमंच ,जो सौ सालो तक मुम्बई तथा अन्य स्थानों में जीवित रहा ,उसके बारे में भी यही कहा जा सकता है |उसमे प्रयोग हुए लेकिन उस का रुख पेशेवर बना रहा |यह व्यवसायिकता की एक देन थी |लेकिन बाद में मुम्बई के हिन्दी रंगकर्म से यह व्यवसायिकता खत्म हो गई |इससे यहाँ रंगकर्मी भी पेशे के स्तर पर सक्रियता से प्रे होते गए |यहाँ इप्टा ,पृथ्वीराज कपूर तथा सत्यदेव दुबे ने भी अपने -अपने कई बाद में समाजपयोगी रंगकर्म किया |यह बिखरा हुआ रंगकर्म पृथ्वी थिएटर के उदय यानी वर्ष १९७४ के बाद ही एकसूत्र हो पाया |यहीं से मुम्बई में पेशेवर रंगकर्म ने जोर पकड़ना शुरू किया |मुम्बई में कई नाट्य संस्थाए है ,अलग -अलग ढंग का रंगकर्म है घाटे का रंगकर्म है,तो गाड़ी -बंगला दिलाने वाला रंगकर्म भी पेशे के नाम पर सैकड़ो मंचन करने का एक ही नाटककार पर जुगली करने की प्रवृति है ,तो साथ ही बीस -पच्चीस मंचन से ही संतुष्टि प्राप्त करने की प्रवृति भी है ||अपने नाटक में “हाउसफुल ,का बोर्ड लटका हुआ देखने का लालच है तो चुनिंदा दर्शकों के बूते पर ही रंगकर्म करने की इच्छा भी |नाटक है तो नाटक के नाम पर तरह -तरह की नाट्य गति विधियां तथा नाट्योत्सव भी |

मुम्बई के हिन्दी रंगकर्मियों केलिए पृथ्वी थिएटर इस कदर प्रेरणास्रोत रहा कि मुम्बई में कई -कई नाट्य संस्थाए खुल गई |इन्हें तीन श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है |प्रथम श्रेणी की नाट्य संस्थाए नियमित रंगकर्म करती है -पृथ्वी में ,मुम्बई के अन्य नाट्यगृहों में ,देश के भिन्न नगरों में |जिन्हें अवसर मिलता है वे विदेश में भी मंचन कर आते है |दूसरी श्रेणी कि नाट्य संस्थाए है तो पेशेवर लेकिन उनका रंगकर्म पहली श्रेणी के रंगकर्मियों की तरह नियमित नहीं है |भले ही अनियमित हो लेकिन रंगकर्म करते जरुर है ,करते रहना चाहते है संसाधन जुटा नहीं पाते इसलिए ठंडे पड़ जाते है |तृतीय श्रेणी की नाट्य संस्थाएं जोश में आकर बनी हुई है |चूँकि मुम्बई में रंगकर्म का अच्छा माहौल है ,कई उत्साही कलाकार नाट्य संस्था बना लेते है |ये नाट्यकर्मी लम्बे अंतराल से नाटक खेलते है अपना अस्तित्व जताने के लिए भी |लेकिन ये निरुपयोगी नाट्यकर्मी नहीं है |श्रोता ,दर्शक ,कार्यकर्ता ,नाट्यप्रेमी के रूप में अपना सक्रिय योगदान देते है |इन्हें जो अभाव खटकता है वह संसाधनों का ,वरना ये भी नियमित नाटक करते |

प्रथम श्रेणी की नाट्य संस्थाए केवल नाटक नहीं खेलती सालाना नाट्योत्सव आयोजित करती है ,चर्चा -सत्रों के माध्यम से रंगकर्म के विभिन्न आयामों -समस्याओं पर चिन्तन करती है कार्यशालाए लेती है दूसरी श्रेणी की नाट्य संस्थाए यह सब नहीं कर पाती |कुछ रंगकर्मी तो सिद्धांतस्वरूप केवल नाटक ही खेलना पसंद करते है

|सत्यदेव दुबे ,नसीरुद्दीन शाह आदि इसी विचारधारा के लोग है |लेकिन इस सच्चाई को स्वीकारना होगा कि मुम्बई के हिन्दी रंगकर्म में आज जो भी जीवंतता बरकरार है वह केवल नाटको के मंचन के कारण ही नहीं तरह -तरह की नाट्य गतिविधियों के कारण भी |इन गतिविधियों के कारण भी मुम्बई के रंगकर्मियों में सम्पर्क सूत्र बना रहता है और एक दुसरे को प्रोत्साहन मिलता है |

पृथ्वी थिएटर और उसके प्रणेता एच .जेनिफर कपूर ,शशिकपूर ,संजना कपूर की तारीफ़ करते हुए मुम्बई के हिन्दी रंगकर्मी और नाट्यप्रेमी थकते नहीं |लेकिन पृथ्वी कोअब -तक कैसे -कैसे थपेड़े खाने पड़े है ,यह भी हिन्दी रंगकर्मी जानते है |पृथ्वी थिएटर बंद होने की कगार तक भी पहुँच चुका है ,घाटा सहते रहना तो उसके लिए आम बात है |लेकिन वह बंद नहीं होना चाहता ,क्योंकि उसके बंद होने के माने कई -कई हिन्दी रंगकर्मियों का धराशायी हो जाना है |मुम्बई में ऐसा एक भी हिन्दी रंगकर्मी नहीं जिसे पृथ्वी के सहारे की जरूरत नहीं है |प्रथम श्रेणी के रंगकर्मी भी भले ही बाहर भी नाटक खेलते हों ,लेकिन उनका प्रमुख आधार पृथ्वी थिएटर ही है |पृथ्वी थिएटर से तो एन .सी .पी .ए .,नेहरु सेंटर आदि नाट्य संस्थानों ने भी प्रेरणा ग्रहण कि है |पृथ्वी कि तर्ज पर इन्होंने अपने यहाँ अपनी गतिविधियाँ बढायी है |

मुम्बई का रंगकर्म अब फिर पेशेवर बन चुका है ,और इसी कारण अब उसमे कुछ खामियाँ भी आ चुकी है |कई रंगकर्मी अपना धैर्यगवाँ

चुके ,समझौते करने लगे है ,आसान रास्ते चुनने लगे ,ऐसे तरीके अपनाने लगे ताकि उनका चक्का जाम न हो |लेकिन कुछ ऐसे रंगकर्मी है जो जितने ईमानदार और समर्पित रंगकर्मी पहले थे उतने ही आज भी है |पहले अमरीश पुरी ,सुनील शानबाग जैसे रंगकर्मी नौकरी करते थे और रंगकर्म करते थे |आज मुम्बई का कोई हिन्दी रंगकर्मी नौकरी नही करता |वह कला क्षेत्र का पेशेवर बन कर ही जीवनयापन करना चाहता है |अत:पेसे के नाम पर ऊल -जुलूल और नैतिकता से परे कहे जाने वाले काम भी करता रहता है |उसे कोई संकोच नहीं है |पेशे के रूप में रंगकर्म के साथ उसका यही सुलूक होता है जमीनी संघर्ष उसके लिए श्रम की बात है |निश्चय ही एक रंगकर्मी का संघर्ष निरंतर बना रहता है ,लेकिन इन पेशेवर रंगकर्मियों का संघर्ष ठाठ -बाट वाला है |कभी -कभार यह संघर्ष उनके व्यक्तित्व में मानवीय धरातल पर चार चाँद लगाने वाला भी साबित होता है उनके संघर्ष का सम्मान तो किया जा सकता है ,फिर भी वह शत -प्रतिशत स्वीकार्य नहीं हो सकता |

मुम्बई के प्रमुख हिन्दी रंगकर्मियों में शामिल है -ए .के .हंगल .जो इप्टा के शुरूआती दिनों से उससे जुड़े है |सत्यदेव दुबे ,अपने आप में एक संस्था है |मुम्बई में शुरू में इन्होंने इब्राहिम अलकाजी के साथ वार्डन रोड इलाके के मकान की छत पर रंगकर्म किया |ये हिन्दी -मराठी के छबीलदासी नाट्य आन्दोलन से भी जुड़े रहे है |हिन्दी के अलावा मराठी तथा अंग्रेजी में भी रंगकर्म करते है |

कुछ हिन्दी कुछ कुछ हिन्दुस्तानी कुछ उर्दू रंगकर्म करने वाले में साजिद रशीद,इक़बाल नियाजी, असलम परवेज, मुजीब खान, आफताब हसनैन ,डा.सादिका नवाब , रज्जाक आदि| साजिद रशीद उर्दू के जाने माने कथाकार तथा हिन्दी उर्दू के प्रत्यक्ष अप्रतयक्ष रंगकर्मी है | नाटक लिखने के साथ साथ नाटको का आयोजन भी करते है इन्कलाब नियाजी किरदार नाट्य संस्था के माध्यम से हिन्दी उर्दू के नाटको को समान रूप से खेलते है | वे नाटककार ,निर्देशक,अनुवादक तथा हिन्दी उर्दू के नाट्य स्तम्भ समीक्षक है| आयडिया नाट्य संस्था के मुजीब खान हिन्दी में मुंशी प्रेमचंद कि कहानियों का नियमित मंचन करते है उनका ध्येय प्रेमचन कि सारी कहानियों का मंचन करने का है | बाड में वे किसी अन्य कहानीकार कि कहानियों का मंचन करना चाहते असलम परवेज एकजुट के रंगकर्मी है , नाटक लिखते है उनका रूपांतरण अनुवाद करते है | उनके नाटक गुजरती में भी खेले जाते है | मुंबई में हिन्दी के तीन बड़े नाटककार रहते है सुरेन्द्र वर्मा डा. विनय ,विभारानी | सुरेन्द्र वर्मा सूर्य कि अंतिम किरण से सूर्य कि पहली किरण तक ,आठवा सर्ग आदि नाटको का लेखक है तो डा.विनय ने एक और प्रश्नमृत्यु कपयानी रूपक आदि नाटक लिखे है | वह अपनी प्रतीका दीर्धामें नाटको पर निरंतर चिंतन करते करवाते रहते है | उनके कई नाटक मुंबई तथा अन्य स्थानों पर मंचित हुए है |

शेष भारत का रंगकर्म भी उतना ही महत्वपूर्ण है| कई मायनों में एन.एस.डी.तथामुम्बाई के पेशेवर रंगकर्म से अधिक सराहनीय | क्योकि बैगेर संसाधनों और सुविधाओ से इसे पूरा किया जाता है | कोई लालच और समझौता नहीं होता | एक पागलपन के तहत ईमानदारी से किया जाता है | महानगरी समझौता से दूर अपनी मिट्टी और परम्पराओसे जुड़े प्रयोग करते हुए रंगकर्म को संवारा जाता है | यहाँ संतुष्टि है और मंचन कि संख्या पर नजर नहीं रहती | अपनी प्रतिभा मांजने के लिये नये नयेनाटक खेले जाते है न कि एक ही नाटक के कई कई मंचन पर उसे भुनाया जाता है | शेष भारत के हिन्दी रंगकर्म के साथ रंगकर्मियों कि इच्छाशक्ति जुडी है , उन्हें रंगकर्म के लिये कोई विवश नहीं करता | ऐसे रंगकर्म से पैसा कमाया ही नहीं जाता बल्कि उसमे झोका जाता है | इस रंगकर्म में केवल नाटक ही नहीं खेले जाते कविताओ का मंचन कहानियों का मंचन ,अन्य किसी प्रकार के साहित्य या ठोस कल्पनाओ का मंचन होता है | ये रंगकर्मी मौलिक हिन्दी नाटो का आभाव जैसे जुलमें नहीं फेकते अपितु ढूढ ढूढ कर साहित्यक श्रेणी के नाटक खेलते है ये वो नाटक होते है जो मुंबई के तथाकथित पेशेवर नहीं खेलते | शेष भारत के रंगकर्मी तो नाट्य कार्यशालाओ के जरिये या अन्य माध्यमो से नए नाटक का लेखन भी कर लेते है |दुखद बात ये है कि इन रंगकर्मियों को अन्य कला क्षेत्र के कलाकरो के तरह नाम नहीं मिलता सारा नाम तो महानगरो वाले ही ले लेते है |

अकेले दिल्ली में एन.एस.डी.को छोड़ दिया जाय तो कम से कम पचास नाट्य संस्थाए है जो प्रोढ तथा बाल रंगकर्म दोनों में व्यस्त है | इनमे प्रमुख है अभियान (राजेंद्र नाथ) संभव (देवेन्द्रराज अंकुर)अस्मिता (अरविन्द गौड़)अलारिपू (त्रिपुरारी शर्मा)बैरी जान (थिएटर एक्शन ग्रुप),रेखा जैन (उमंग थिएटर एंड टेलीविजन एसोशिएट (अमाल अल्ल्लाना निसार अल्लाना)विवादी (अनुराधा कपूर,रामगोपाल बजाज)प्रयोग(एम्.के.रैना मोहन महिषी) आदि रंगकर्मी कुछ विशिष्ट संस्थाओ और प्रयोग से जुड़े हुए है | इनके अलावा कई दूसरी रंग संस्धाए भी नाट्यकर्म में अपना योगदान देती रहती है |

श्रीराम सेंटर फार आर्ट एंड कल्चर ,साहित्य कला परिषद् परिषद् का रंगमंडल उर्दू अकादमी के साथ साथ अपने आप में संस्था बन चुके इब्राहीम अलकाजी नटरंग प्रतिष्ठान ब्रिज मोहन शाह जीतेन्द्र कौशल आदि रंगकर्मियों ने अपनी हिन्दी रंगकर्म के विकास में संस्थागत स्तर पर अपने ढग से विशिष्ट योगदान दिया है | हर दो प्रतिभाओ के योगदान में अंतर नहीं किया जा सकता क्योकि हर योगदान का अपना महत्व है| दशको से घटा सहते आना , फिर भो उद्देश्पूर्ण रंगकर्म करना जीवटता का काम करना है | इस दृष्टिकोणसे किसी रंगकर्मी व्दारा कितने नाटक खेले गए , नाटको के कितने मंचन हुए यह मुद्दा रंगकर्म सम्बन्धी इच्छाशक्ति और समर्पण भावना कि तुलना में गौण हो जाता

है | तब तक विपरीत परिस्थितिया रहेंगी ,इस प्रकार के मुद्दे गौण ही रहेंगे|

अहिन्दी भाषी महानगर कोलकाता में उषा गांगुली पिव्हले तीन दशको से हिन्दी रंगकर्म कर रही है | उन्हें कोलकाता के बहार भी मान्यता मिल चुका है और वो समान्तर रूप से भिन्य नगरो में नाटक खेलती है कोलकाता में प्रतिभा अग्रवाल ,श्यामा नन्द जालान ,विमल लाठ , बहुरूपी आदि का रंगमंचीय योगदान पूरा भारत जनता है | प्रतिभा अग्रवाल का नाट्य शोध संस्था रंगकर्म के विभिन्न पहलुओ को समेटे हुआ है | हिन्दी भाषा से अपेक्षाए बढ़ गयी है | अतः अहिन्दी भाषा क्षेत्रों किसी कला को प्रतिफलित करना या रंगकर्म करना एक महत्वपूर्ण कदम है लखनऊ के भार्देंदु नाट्य अकादमी एन.एस.डी.के बाद महत्वपूर्ण प्रतिक्षण संस्थान के रूप में उभरी है | प्रतिक्षण संस्थान कि भूमिका व्यापक होती है | रंगकर्म प्रतिक्षण संस्थानों तथा बड़े रंगकर्मी से केवल रंगकर्म ही करते रहने कि अपेक्षाए नहीं कि जा सकती \ उन्हें रंगकर्म के विकास के लिये एक व्यापक माहौल बनाना पड़ता है | यह अपेक्षा करना भी अव्यवहारिक होगा कि प्रशिक्षण संस्था या नाम कम चुके रंगकर्मियों में कोई कमजोरी नहीं होगी | कमजोरियों से अधिक उनका योगदान है तो इच्छा अनिच्छा से उनकी कन्जोरिया भुलाई जा सकती है|

कई नाट्य इकाईया प्रशिक्षण संस्थानो के सामान दर्जा प्राप्त न कर पाई हो | लेकिन जिस स्वरूप में काम करती है वह किसी व्यक्ति विशेष

रंगकर्मी के काम से कई गुना बड़ा है | निश्चय ही संस्थान इकाईयों के न्यूनतम योगदान को भी स्वीकार करना चाहिये |राज्य कि शासनधीन स्वायताशासी नाट्य इकाईयों ,स्वतन्त्र नाट्य इकाईया ,ट्रस्ट के नाट्य संस्थान ,विश्व विधालय के नाटक विभाग आदि रंगकर्म को बढाने में सहायक होते है |यही बात केन्द्र तथा राज्य सरकार के नाटक अकादमियों पर भी लागू होता है |उ.प्र. संगीत नाट्य आकादमी कि पत्रिका छायानट ,सागर विश्वविधालय कि पत्रिका नाट्यम ,राष्ट्रीय नाट्य विधालय का रंग प्रसंग |

नटरंग पत्रिका के रूप में शुरू हुआ बाद में प्रतिष्ठान भी बन गया प्रतिभा अगरवाल का रंगकर्म नात्य्शोध संस्थान में परिवर्तित हो गया पृथ्वीराज कपूर के रंगकर्म बाद में पृथ्वी थिएटर का रूप ले लिया |

देश में अन्य प्रमुख स्थान जहा कही बड़ी शिद्दत से हिन्द रंगकर्म हो रहा है जैसे उज्जैन कि कलिदस एकेडमी ,लोक कला अकादमी अंकुर अभिनव रंगमंडल देहरादून कि थिएटर स्पेश कला मंच परिवार चंडीगढ कि अभिनेत उत्तर मध्य सांस्कृतिक केंद्र ,जनसंपर्क व संस्कृत विभाग हरियाणा ,गोवा कि कला अकादमी गीतं बुध्ध नगर कि विविध बलवंत ठाकुर कि नटरंग जम्मू संगीत नाट्य अकादमी राजस्थान कला साहित्य संस्थान आदि |छत्तीसगढ़ के रायगढ़ में पति पत्नी रंगकर्मी अजय आठले तथा उषा आठले अर्से से हिन्दी रंगकर्म कर रहे है | उन्होंने नाट्यकार्यशाला के माध्यम से मौलिक नाटक लिखे लिखाये है उषा जी

रंगकर्म कि विभिन्न पहलुओ पर पत्र पत्रिको में लेखन करती है | छतीसगढ़ के स्टील प्लांट के वरिष्ठ प्रबंधक दीपक पाचपोर रंगकर्म में अपना योगदान दे रहे है | मध्य प्रदेश के जबलपुर में हिन्दी नाटको को गतिविधिया लगातार और प्रमुखता से चलती है |

लेखक और नाट्य प्रदर्शन

करीब 30 साल पहले आधुनिक रंगमंच से जुड़े देश के हम रंगकर्मी यह मानते थे कि रंगकर्म में नाटककार का महत्व सर्वोपरि होता है | वह न केवल रंगमंचीय गतिविधियो को मुख्य अभिकर्ता होता था बल्कि उसकी भौतिकता से जुड़े हर पहलु पर नियंत्रण करता था | निर्देशक और अभिनेता के लिये उसकी दृष्टी पावन होती थी | निर्देशक जो कलाकार और प्रदर्शन से जुड़े अन्य पहलुओ का नियंत्रण करता है , और उसका नौकर समझा जाता था | एक ऐसी भूमिका जो निर्देशक बिना किसी हिचक के निभाते थे |

आज कई कारणों से ,इस स्थिति को चुनौती दे पाना सम्भव हो सका है |इस सभा में यह बताना बेकार होगा कि किन कारणों से ये बदलाव आ पाए है |मेरे ख्याल से यहाँ मौजूद लोग इस प्रक्रिया से अवगत है जिसकी शुरुवात दो दशको पहले हुई थी |यही कहना पर्याप्त होगा कि रंगमंच के बुनियादी पहलुओ की गहरी समझ और परम्पराओं से पुनः जुड़ पाने की भारतीय रंगकर्मियों की गहरी इच्छा ने अचानक उनके अंदर यह जागृति पैदा कर दी |पाश्चात्य यथार्थवादी धारा रंगमंच के

सम्पूर्ण प्रभाव को अशक्त बना देती है |रंगमंच और यथार्थवाद को इसकी सम्भावनाओं की पूर्ण अभिव्यक्ति में बाधक माना जाता है ,क्योकि इसके कारण अभिनेताओं पर बाध्यकारी सीमाएं खड़ी हो जाती है जिनके कारण रंगमंचीय भाषा में गति आती है |इस बात का एहसास हुआ कि उन्मुक्त कलाकार रंगमंच की शक्ति का स्रोत होते है |,न कि शब्द |

६० के दशक के अंत में और ७० के दशक के आरम्भ में अनेक भारतीय नाटको को शाब्दिक बताया गया |यहाँ तक कि कई लेखको आध रंगाचार्य ,मोहन राकेश ,विजय तेंदुलकर ,गिरीश कनार्ड और बादल सरकार को इस आधार पर आलोचना सहनी पड़ी |यह देखने में आया कि वे अपने नाटको में ,विशेषकर उसके अंत में नाटकीय अवस्था को रंगमंचीय भाषा में बदल पाने की अपनी असमर्थता को छिपाने के लिए

लम्बे -लम्बे संवादों की योजना करते थे |

नाटक है ,रंगकर्म है ,विमर्श नहीं

टेक्नोलॉजी में आए परिवर्तनों और संचार की नई प्रविधियों के साथ मुझे लगता है कि परफार्मिंग लैंग्वेज में कई तरह के बदलाव आए है |इन बदलावों ने रंग भाषा को कई स्तर पर बदल दिया है या बदलने की बाध्यता पैदा कर दी है |आज के नाटक के लिए एक नई रंगभाषा आविष्कृत करने की जरूरत है |इस आविश्कर्म को हड़बड़ी में सम्भव नहीं किया जा सकता |दिक्कत यह है कि रंगकर्मियों और नाटक लेखकों

के बीच ऐसा कोई विमर्श पुरे दृष्य में मौजूद नहीं है ,जिससे इस नई आवश्यकता को समझना सम्भव हो सके और नई रंग भाषा किस किस्म की चीजों के समायोजन और किस किस्म की प्रवित्तियो के प्रति प्रतिरोध से सम्भव हो सकेगी इसकी एक नई समझ पैदा हो सके |एक कसमसाहट -सी दोनों स्तरों पर है |इसलिए या तो हड़बड़ी में कुछ सामान्यीकरण कर लिये जाते है या नाटक लेखक रंगकर्मियों पर और रंगकर्मी नाटक लेखक पर दोषारोपण करके पल्ला झाड़ लेते है |समस्या जहाँ की तहाँ बनी रहती है |दर्शक के चारों ओर अंधेरे का जो एक झीना -सा ही सही पर जरुरी घेरा था ,जो सिनेमा के स्क्रीन और दर्शक के बीच या नाटक के मंच और दर्शक के बीच एकाग्रता को सघन बना देता था ,जो उसे उसके आसपास से अलग कर देता था ,टेलिविज़न ने उसे खत्म कर दिया है |दर्शक में एक अजीब- सी कैजुअलनेस बढ़ी है |देखने की एकाग्रता खत्म हो गई है |टेलिविज़न के दर्शक के आसपास पूरी रौशनी है |उसमें चीजों की और लोगों की उपस्थिति बनी रहती है |आसपास घटित होता कार्यव्यापार भी चलता रहता है |इसने हमारे देखने के पुरे व्यवहार को ही बदल दिया है |अब वह अन्धेरे के घेरे में एक असुविधा महसूस करता है |उससे बार -बार कहना पड़ता है कि नाटक के दौरान वह अपना मोबाइल बंद रखे |पिछले दिनों एक नाटक के दौरान मैंने जब अपने बगल में बैठें एक दर्शक से मोबाइल बंद करने को कहा तो उसने उसकी घंटी को तो बंद कर दिया पर मोबाइल के डायल पर लगातार एक हरी -पीली रोशनी मेरी आँखों कि तंग करती रही |मुझे तब और भी

अधिक ताज्जुब हुआ जब मैंने जाना कि वह एक अमेच्योर थियेटर का युवा कलाकार था |

पिछले दिनों अभिनेताओं ,खासतौर से उन अभिनेताओं में जो टेलिविज़न पर भी काम करतें है और शौकिया रंगकर्मी भी है ,के बारे में रंग निर्देशक बंसी कौल ने एक दिलचस्प बात कही थी |टेलिविज़न के छोटे पर्दे पर दिखाये जाने वाले सीरियल्स में अधिकांश समय क्योंकि अभिनेता का चेहरा या धड़ ही दिखाई देता है ,इसलिए जब वह वापस रंगमंच पर आता है तो आंगिक भाषा का व्यवहार करने और रंग गतियो से गुजरने में उसे असुविधा होने लगती है |वह लगभग स्टिफ (सख्त)हो जाता है या होने लगता है |इसलिए नाटक एक किस्म से स्पोकन ड्रामा में बदल रहा है संवादोंन्मुखता बढ़ रही है |लेकिन इसका एक दुसरा छोर एक दूसरा एक्सट्रीम (चरम)भी है ,जहाँ रंगकर्मी नाटक को मात्र एक तीव्र गतियो वाली गतिविधि में ,देह भाषा के संयोजनों में याने लगभग एक झांकी में अवमूल्यित कर देते है कि किसी नाट्यलेख की आवश्यता ही खत्म हो जाती है वह एक अनुष्ठान की प्रस्तुति बन कर रह जाता है |ऐसे नाटक पिछले दशको में कई महत्वपूर्ण युवा निर्देशकों ने किए है |ब्रेश्ट ने कही लिखा है कि चाहे ये माना जाता हो कि थिएटर की शुरुवात अनुष्ठान से ही हुई हो लेकिन थिएटर तभी थिएटर बनता है जब वह अनुष्ठान से अलग होता है | रंगभाषा के सामने यह एक दूसरी दिक्कत इस दौर में आयी है |उसमे शब्द बहुलता

बढ़ रही है और आंगिक भाषा और गतियाँ सीमित हो रही है |आंगिक भाषा जो नाटक की स्वायतता की भाषा थी उसका सीमित होना नाटक की अपनी स्वायतता को भी सीमित कर रहा है |पिछले दिनों एक सेमीनार में कमलेश दत्त त्रिपाठी ने इस ओर इशारा किया था कि रिप्रजेंनटेशनल थिएटर प्रजेंटेशन थियेटर में बदल रहा है |

हिन्दी रंगमंच पर अनेक निर्देशक पूरी तरह से प्रोफेशनल है उनके पास नाटक का तकनीकी ज्ञान है| वे बाकायदा नाट्य विधालय द्वारा प्रशिक्षित है |जबकि नाटककार की स्थति इससे एकदम उलट है |नाटक लेखन का किसी किस्म का तकनीकी ज्ञान उसके पास नहीं है |इसे जानने के लिए किसी किस्म के प्रशिक्षण केन्द्र भी नहीं है |अध्ययन के आधार पर ही वह नाटक लेखन में प्रवेश करता है |इसलिए आधुनिक रूप से प्रशिक्षित रंगकर्मी और अप्रशिक्षित नाटककार के बीच संवाद से ज़्यादा टकराव की स्थति बन जाती है |साहित्य से नाटक लगभग एक बहिष्कृत विधा बन गई है |इसलिए जिस तरह कोई कवि ,कथाकार या आलोचक होता है |उसी तरह हिन्दी में मुक्मिल तौर पर कोई नाटककार ढूंढना मुश्किल है |नाटक लेखन वह सेकेंड्री (दोयम)काम की तरह ही करता है रंगमंच और नाट्यलेख के बीच का टकराव आज का नहीं है |वह तो प्रसाद के समय में ही शुरु हो गया था |प्रसाद इस अर्थ में जिद्दी भी दिखाई पड़ते है |उन्होंने लिखा था कि रंगमंच के सम्बन्ध में यह भारी भ्रम है कि नाटक रंगमंच के लिए लिखे जाए |प्रयत्न तो यह

होना चाहिए कि नाटक के लिए रंगमंच हो ,जो व्यवहारिक है |इसकी प्रतिक्रिया में लक्ष्मीनारायण मिश्र ,उपेन्द्रनाथ अश्क ,राजकुमार वर्मा आदि नाटककार आते है जो रंगमंच के साथ संवाद और हस्तक्षेप का रिश्ता बनाने के बजाय उसके अनुरूप नाट्यलेख तैयार करने लगते है | यह स्थिति न तो नाट्यलेख को विकसित करती है न रंगमंच का विकास होता है |मोहन राकेश और ओम शिवपुरी के नाट्य ग्रुप में जब एक संवाद की स्थिति बनती है तो नाटक में बदलाव आता है |हिन्दी में नाटककार और रंगकर्मियों के बीच संवाद की स्थिति बीच -बीच में बनती है |साथ काम करने के कई उदाहरण भी मिल जाते है |लेकिन कभी निर्देशक के अपने अहं और कभी लेखक के अहं में यह संवाद टूट जाता है |मुझे कई बार लगता है कि निर्देशक का ज़्यादा ज़ोर और ज़्यादा ध्यान नाटक के प्रदर्शन पर होता है लेखक का ज़्यादा ध्यान या ज़्यादा ज़ोर नाटक में व्यक्त विचार पर होता है |निर्देशक का पाठ और अभिनेता का पाठ कई बार अपने नाट्यकर्म के कारण और कई बार व्यक्त विचार के प्रति लापरवाही के कारण लेखक के इंटप्रिटेशंस (व्याख्या)को बदल देता है |लेखक के लिए यह स्थिति पीड़ादायक होती है |तकनीक पर जोर ,विचार और विश्लेषण के प्रति बहुत बार लापरवाह बनाता है |तकनीक को जानना और उसे उपयोग करने में प्रशिक्षित होना निर्देशक को नाट्यालेख और उसमे आए विचार या इंटरप्रीटेशन के प्रति अहमन्य बना देता है इस तरह के टकराव के चलते अक्सर नए नाट्यलेखको के प्रति अच्छे नाट्य समूहों और निर्देशकों में एक

नकारात्मक रवैया दिखाई देता है |बहुत सारे नाटक जो रंगकर्मियों और नाटककारो के बीच संवाद से बेहतर बनाये जा सकते थे ,नहीं बनाये जा पाये और उनका मंचन भी नहीं होता |नाटको की कमी का एक रोना सर्वत्र सुनाई देता रहता है|इस स्यापे का वास्तविकता से कोई लेना देना नहीं है |

बीच में एक स्थिति और दिखाई दी थी जिसमें भानु भारती ,मोहन महर्षि ,एम .के .रैना ,प्रसन्ना आदि ने स्वंय ही नाट्यालेखो को तैयार किया था |इसमें कुछ नाट्यालेख ऐसे थे जो किसी न किसी नाटककार के साथ मिलकर तैयार किये गये थे |ऐसे आलेखों की प्रस्तुति और प्रकाशन के बाद कई तरह के विवाद भी सुनाई पड़े |ये आलेख अपनी प्रस्तुति में चाहे सफल रहे हो पर क्या नाट्यालेख अगर ऐसा होता तो उन आलेखों की दूसरे निर्देशकों और रंग समूहों द्वारा भी प्रस्तुतियाँ की जानी चाहिए थी या उन्हें नाट्य लेखन का एक माँडल बनना चाहिए था पर ऐसा हुआ नहीं |हबीब तनवीर इसके अपवाद हो सकते है |वे निर्देशक से अलग एक लेखक भी है |इसलिए तकनीकी ज्ञान भर से एक माँडल या महत्वपूर्ण नाट्यालेख तैयार नहीं किया जा सकता |प्रसाद ने अच्छे नाटक को शरीर में मस्तिष्क का स्थान दिए जाने की बात कही थी ऐसा एक रिश्ता रंगकर्म और नाटक लेखन के बीच बनना चाहिए |हालाँकि चाहिए तो बहुत कुछ पर हिन्दी में नाटक की स्थिति में स्पीड ब्रेकर बहुत है |एक समाज या जाती में नाटक की स्थति इस बात को भी

इंगित करती है कि वह आंतरिक रूप से अपने व्यवहार और विचार में कितना जनतांत्रिक हुआ है |

एक रंग निर्देशक के साथ जब आपकी पटरी कुछ ठीकठाक -सी बैठ जाती है तो वह विचार को विजुअल में रूपांतरित करने में आपकी मदद करता है और लेखक निर्देशक के विजुअल को एक विचार के रूप में इंटरप्रेट करने में उसकी सहायता करता है अगर रंगमंच एक ताली है तो वह दो हाथों से ही बजेगी |एक हाथ निर्देशक काऔर एक नाटककार

नाटक और व्यवस्था विरोध

नाटक और रंगमंच के विषय में प्राय:यह टिप्पणी की जाती है कि कोई भी व्यवस्था उसे इसलिए ज़्यादा तरजीह नहीं देती क्योंकि वह अपनी मूल प्रकृति में ही व्यवस्था विरोधी होता है | इसमें कोई संदेह नहीं कि नाटक एक ऐसी विधा है जो किसी बनी -बनाई अवधारणा को केंद्र में रखकर कम- से-कम दो विरोधी विचारधाराओं के टकराव से आगे बढती है |और इसी में इस विधा की नाटकीयता निहित है |लेकिन हम विचार ,सिदांत या अवधारणाओ के पारस्परिक विरोध को ही प्राय:व्यवस्था विरोध मान बैठते है और बड़े ज़ोर -शोर से उसका उसी रूप में प्रचार करने लगते है |लेकिन क्या सचमुच ऐसा होता है अथवा हो सकता है ?

सबसे पहले सवाल तो यही उठता है कि हम किस व्यवस्था का विरोध कर रहे है ?हम स्वयं उस व्यवस्था का चुनाव करते है ,उसके अविभाज्य अंग है और उसके द्वारा मिलनेवाली हर छोटी -बड़ी सुविधा का पूरी

तरह से लाभ उठाते है ,इस वस्तुस्थिति के बाड हमारे विरोध की क्या सार्थक भूमिका रह जाती है ?इसके उदाहरण के रूप में पश्चिम बंगाल में होनेवाले रंगमंच का हवाला दिया जा सकता है |जब तक वहाँ वामपंथी शासन -व्यवस्था नहीं थी ,तब तक वहाँ की नाट्य -मंडलियो की प्रस्तुतियों में प्राय:विरोध के स्वर और तेवर दिखाई पड़ा करते थे ,लेकिन जब से पिछले बीस -पच्चीस सालों से वहाँ उपयुक्र्त शासन -व्यवस्था का वर्चस्व स्थापित हुआ है ,वहाँ के रंगकर्म का चेहरा ही बदल गया है |इसे सत्तर वर्ष तक सोवियत संघ में स्थापित सत्ता के शासन काल के सन्दर्भ में भी अच्छी तरह से देखा जा सकता है |इस दौरान वहाँ किसी भी ऐसी नाट्य रचना और मंचन की जानकारी नहीं मिलती जो व्यवस्था विरोधी तो क्या ,किसी भी तरह के विरोध को दर्ज करती हो ,यदि भूल से किसी रचना में ऐसे तेवर दिखाई भी पड़े तो उसके रचनाकारों का क्या हश्र हुआ ,यह हम सब जानते है ? दूसरा सवाल यह उठता है कि व्यवस्था किसी भी सिदांत या विचारधारा से सम्बद्ध क्यों न हो ,वह किस हद तक अपने विरोध की छुट देती है अथवा दे सकती है ?आमतौर पर तो शायद हर व्यवस्था में कहीं -न-कहीं असहमति के लिए हमेशा स्थान रहता है और वह होना भी चाहिए अन्यथा हम उससे अलग कौन -से विकल्प की तरफ संकेत कर पाएँगे ,लेकिन भूल तब होती है जब हम अपने द्वारा व्यक्त असहमति को ही व्यवस्था विरोध का पर्याय मान लेते है |देखा जाए तो इसे भी एक तरह से " जस्टिफाई ,किया जा सकता है कि कला और साहित्य में विरोध की भाषा हमेशा

संकेतात्मक हुआ करती है ||ऐसे में यदि हमारा माध्यम व्यवस्था के गलत पक्ष पर ऊँगली भी दे तो काफी है | यदि इस विचार को स्वीकार कर लिया जाए तो यह भूमिका तो रंगमंच अपने जन्मकाल से निभा रहा है और उसे लेकर किसी को कोई आपत्ति नहीं है |दिक्कत तब पैदा होती है जब एक गलत व्यवस्था का विरोध करने के लिए आप दूसरी व्यवस्था से पूरी आर्थिक सहायता लेते है |सिर्फ आर्थिक सहायता ही नहीं लेते ,अप्रत्यक्ष -प्रत्यक्ष रूप में उस व्यवस्था का प्रचार भी करते है |क्या ऐसी स्थिति में आप एक स्वतंत्र रचनाकर्मी न होकर किसी के प्रचार का माध्यम या खिलौना बनकर नहीं रह जाते ?

यदि इस रूप में गौर किया जाए तो उन नुक्कड़ नाटक मंडलियो को गलत कैसे ठहराया जाए जो आज बड़ी -बड़ी उत्पादन कम्पनियों द्वारा बनाई जानेवाली उपभोग की वस्तुओ का अपने माध्यम में प्रचार -प्रसार कर रही है और उन्हें बेचने में मदद कर रही है |इसके बदले में उन कलाकारों को ढेर सारे पैसे मिल रहे है |इस काम ने उनकी रोज़ी -रोटी की शाश्वत समस्या को हमेशा के लिए दूर कर दिया है और उनके चेहरे पर रौनक आ गई है |

ऐसे में यह पूछने का भी मन होता है कि आखिर हम किस व्यवस्था या विचारधारा को सही माने ?ठीक है कि अपने अतिवादों के कारण वर्तमान व्यवस्था बिल्कुल गलत है तो फिर इसका विकल्प कौन -सी व्यवस्था में है ?अपने देश में पिछले पचास -पचपन बरस में सभी व्यवस्थाओं के

बाड हम किस पर निश्चित रूप से विश्वास करके कह सकते है कि वह व्यवस्था बिलकुल सही है ?क्या ऐसा नहीं लगता कि गलत और सही के सारे विभाजन और रेखाए धूमिल और धुँधले पड़ गए है और ऐसे में कुछ भी निर्णय कर पाना निहायत मुश्किल है |

इस पूरी पृष्ठभूमि के परिप्रेक्ष्य में आज नाटक और रंगमंच जैसे माध्यम की क्या सामाजिक प्रतिब्द्ता है ?क्या आज सचमुच में इस माध्यम की कोई भूमिका है ,रह गई है या हो सकती है ?यदि इन सारे प्रश्नों का कोई सकारात्मक पक्ष हो सकता है तो वह यही है कि ऐसे कठिन समय में ही रंगमंच अपनी ठोस भूमिका निभा सकता है और वह इस रूप में कि समाज में व्याप्त हिंसा ,साम्प्रदायिक तनाव और संघर्षों का सतही चित्रण न करके ,उसके आंतरिक सत्य को उजागर करे |इस आंतरिक सत्य की गुत्थियो और जटिलताओ को सम्पूर्णता में उधाड़कर प्रस्तुत करे और हमे सोचने के लिए ,अपने जीवन में बदलाव लाने के लिए प्रेरित करे |मुश्किल तब पैदा होती है जब हम स्वयं तो वहीं -के -वहीं खड़े रह जाते है और समाज से अपेक्षा करते है कि वह बदल जाए | हम अपने से अलग किस समाज की परिकल्पना कर रहे है ?हम बदलाव के लिए हमेशा दुसरो का ही इंतज़ार क्यों करते रहते है ?जबकि हमें अच्छी तरह से मालुम है कि दुसरा कोई नहीं है और कभी नहीं आएगा |जो भी नई पहल या नई शुरुआत करनी है ,वह हमें स्वयं करनी है और अपने घर से करनी है |

यदि हम नाटक और रंगमंच के पूरे इतिहास पर दृष्टि डाले ,तो यही देखते है कि इस माध्यम की भूमिका और सार्थकता पर ऐसे प्रश्नचिन्ह पहली बार नहीं लगाए जा रहे ?ये प्रश्नचिन्ह कभी कटर पंथी धर्म ने ,कभी तात्कालिक शासन -व्यवस्था ने और कभी बाहर से आई हुई शक्तियों ने लगाए,लेकिन रंगमंच ने हर बार ऐसी स्थितियों का डटकर सामना किया और पूरी तरह से भस्म होकर भी उसी अग्नि में से पुन:जीवित होकर निकला |जरूरत इस बात की है कि हम अपने माध्यम की इस प्रतिरोधात्मक शक्ति और प्रविति -प्रकृति की सही -सही पहचान करे ,उस पहचान को आत्मसात करे और आदमी को आदमी से तोड़ने की बजाय उसे जोड़ने में अपनी भूमिका अदा करे |

इसमें दो राय नहीं हो सकती कि आज के पूरे नकारात्मक माहौल में यदि कहीं कोई आशा की किरण बची हुई है तो वह साहित्य में है ,रंगमंच में है और दुसरे कला माध्यमो में है |यह समय एक बार फिर से सारे कला माध्यमो के एक साथ आ मिलने का समय है इसलिए यह अकारण या संयोग नहीं है कि पिछले कुछ वर्षो में ऐसी कई प्रस्तुतियाँ हमारे सामने आई है जिनमें साहित्य और रंगमंच ,नृत्य और कविता फिल्म और रंगमंच आपस में घुल-मिलकर एक नई रंगभाषा की तलाश में थे |यदि ऐसा माध्यम में सम्भव है तो ज़ाहिर है कि वह हमारे अपने अंदर भी घटित हो सकता है और फिर उसमे एक वृहत समुदाय भी शामिल हो सकता है ,इसके लिए जरुरी है कि हम रंगमंच को एक

तात्कालिक माध्यम या हथियार न बनाकर ,उसके सार्वजनीन ,सार्वकालिक और शाश्वत असर को लेकर क्रियाशील हो |

समकालीन रंगमंच के लिये भारतीय रंगमंच कि दिशाये और संभावना बहुत कुछ है इसके लिये हमें और प्रयास करना चाहिये बहुत पहले मिडिया का इतना प्रभाव नहीं था अब मिडिया बहुत आगे है अभी ये स्थिति है कि लोग रंगमंच करना ही नहीं चाहते उनके लिये रंगमंच एक सीडी है मिडिया में जाने के लिये क्योकि रंगमंच में इतना पैसा नहीं मिलता कि वो अपना जीवन व्यतीत कर सके इसलिए सरकार को ऐसा करना चाहिये कि रंगमंच के कलाकारों को अपना जीवन व्यतीत के लिये कुछ अर्थीक मदद दी जाय| प्रिंट मिडिया को भी चाहिए कि रंगमंच को भी कवर करे पर ऐसा होता नहीं दिल्ली में ही ले लीजिये इतना बड़ा रंगमंच हो रहा है पर कोई कवर नहीं कर रहा है न्यूज चैनल वाले कवर नहीं कर रहे है | पर इन सब के वावजूद भारतीय रंगमंच बहुत विस्तार हो रहा है आज रंगमंच में हर वर्ग के लोग आ रहे है | पहले फ्री में भी बहुत कम लोग रंगमंच देखने नहीं आते थे पर आज टिकट शो भी हाउसफुल हो रहा है , अगर कोई नाटक में फ़िल्मी कलाकार होता है तो उसकी टिकट बहुत पहले सेल हो जाती है आज रंगमंच छोटे छोटे शहर में भी अपना दर्शक बना रहा है | भारतिय रंगमंच आज दुनिया के कोने कोने तक जा रहा है और अपना रंगमंच दिखा रहा है | राष्ट्रीय नाट्य विधालय व्दारा भारत रंग महोत्सव में भारत ही नहीं दुनिया के लोग

भारत आते है और अपना रंगमंच दिखाते है भारतीय रंगमंच को अब अपना कैरियर बना रहे है , बहुत सी बाते कहने पड़ने और सुनाने से नहीं समझ आता पर रंगमंच के व्दारा हम आज समाज कि बुरइयो को दूर कर रहे है | स्त्रियों कि भी बहुत उपलब्धी हुई है| पिछले दशको में पुरुष वर्चस्व प्रधान अन्य क्षेत्र में आये बदलाव कि तरह रंग निर्देशन के क्षेत्र में भी अनेक महिला निर्देशक उभरी है ,जिन्होंने अपनी एक अलग पहचान बनाई है |इसमे से कइयो का काम अनेक दृष्टियो दे महत्वपूर्ण और पद प्रदर्शक रहा है | स्त्रियों कि सामाजिक स्थिति ,जीवन में निजी अनुभव और चीजो को देखने के भिन्न नजरियों के कारण संभवता धीरे धीरे नाट्य निर्देशन कि मान्य पद्धतिमें भी बदलाव आया है |राजधानी में रंगमंचीय स्थिति को देखते हुए अक्सर यह कहा जाता था कि रंगमंच दम तोड़ रहा है और उसके पास दर्शक का आभाव है पर ऐसा नहीं है जब भारत रंग महोत्सव ,रंग स्वर्ण .मोहन राकेश ,भारतेंदु नाट्य उत्सव अदि नाट्य उत्सव हुआ तो इनमे ऐसी कई प्रस्तुति थी जिन्हें देखने के लिये भरी भीड़ उमड़ी लोगो के इस उत्साह और उत्सुकता को देख कर आयोजको को कुछ अतिरिक्त प्रस्तुतिया कि व्यवस्था करनी पड़ी|

कुल मिला कर यही कहा जा सकता है भारत रंगमंच के लिये एक नया इतिहास लिखने कि ओर जा रहा है या ये कह सकते है कि एक अच्छा समय है रंगमंच के लिये|

अरविन्द सिंह. CCRT/JF-3/61/2015